तनाव मुक्त जीवन के रहस्य

अजय वैश्य

तनाव मुक्त जीवन के रहस्य

अजय वैश्य

समर्पण

अपने पूज्य पिता श्री स्वामी नाथ वैश्य
एवं
पूज्यनीया माता स्वर्गीया श्रीमती सावित्री देवी
(11.08.1937-25.11.2004)
(जिनके आशीर्वाद से मैं आगे बढ़ सका)
को सादर समर्पित
व
श्रद्धांजलि

माँ,
"हम-सब" अकेले रह गये!
"हम-सब" अकेले रह गये!

-अजय वैश्य

सन्देश

श्री अजय वैश्य द्वारा लिखित पुस्तक तनाव मुक्त जीवन के रहस्य, मैं समझता हूँ कि अपने आप में उन समस्त बिन्दुओं को समावेशित किय हुए है जोकि न केवल तनावग्रस्त मनुष्य के लिए अन्धेरे में प्रकाश का कार्य करेंगे अपितु नव किशोरों को अग्रेतर जीवन संघर्ष हेतु समुचित आध्यात्मिक दृढ़ता भी प्रदान करेंगे

पुस्तक की सफलता हेतु हमारी सदभावनायें साथ में हैं।

वी. वेंकटाचलम्
प्रमुख सचिव

एस0के0 शर्मा
संयुक्त सचिव

सहकारिता
उ0प्र0 शासन

संदेश

"तनाव मुक्त जीवन के रहस्य" का श्री अजय वैश्य द्वारा लेखन एक असाधारण प्रयास है। इसको पढ़कर अत्यत आश्चर्य व रोमांच का अनुभव हुआ। श्री अजय द्वारा जिस प्रकार दिन-प्रतिदिन की घटनाओं को उदाहरण देते हुए उन पर नियंत्रण रख कर किस प्रकार जीवन को तनाव मुक्त रखा जा सकता है, का वर्णन प्रशंसनीय है। इसमें मुख्य रूप से जीवन पद्ध्धति में अध्यात्म के रास्ते चलते हुये आत्मबल पैदा कर स्वस्थ्य रह कर अनुशासित व तनाव मुक्त जीवन जीने का एक सरल व सहज मार्ग दिखाया गया है, जो अत्यन्त सराहनीय है।

यह पुस्तक आज के इस युग में प्रत्येक व्यक्ति के लिए अत्यन्त उपयोगी है।

एस. के. शर्मा
संयुक्त सचिव

संदेश

एक विदुषी पाठिका की ओर से...

वैसे तो लेखक से मेरा परिचय सन 1981 से है परन्तु वास्तविक परिचय तो तब हुआ जब सन 2000 में कुछ माह मुझे उनके साथ काम करने का अवसर प्राप्त हुआ। कुछ ही महीनों की अल्पावधि के उनके सानिध्य में मैंने पाया कि इस साधारण-से दिखने वाले व्यक्तित्व में सब कुछ असाधारण है।

आज जब उन्होंने अपनी इस पुस्तक "तनाव मुक्त जीवन के रहस्य" के बारे में मेरे विचार लिखने की अपेक्षा की है तो मैं पाठकों से इतना ही कहना चाहूँगी कि यह एक ईमानदार, इन्सानियत, निर्भीकता, धैर्य, प्रेम, सहानुभूति व आत्मविश्वास से परिपूर्ण, ईश्वर के प्रति अगाध निष्ठ रखने वाले, कथनी और करनी के अदभुत समन्वित व्यक्तित्व का जीवन के अनुभव के आधार पर जीवन के प्रति दृष्टिकोण है जो निश्यच ही जीवन को तनाव मुक्त बनाने में सहायक होगा। बड़ी से बड़ी समस्या का मात्र विचारों के आधार पर तनाव मुक्त रहकर बुद्धिपूर्वक हल निकालते मैंने उन्हें स्वयं देखा है।

भाषा बोलचाल की एवं अत्यन्त साधारण है। बहुतायत से उर्दू शब्दों का समावेश लेखक पर पुराने लखनऊ की छाप को स्पष्ट करता है। पुस्तक की मौलिकता मैखिक बातचीत का सा आभास दिलाती है। इसमें समावेशित मूल तथ्यों का ज्ञान शायद हम सभी को थोड़ा बहुत तो है ही परन्तु प्रयोगात्मक रूप से सफलतापूर्वक उन्हें अमल में लाने से असमर्थ क्यों रह जाते हैं, यह पुस्तक इसी दिशा में जागरूकता लाने का एक सार्थक प्रयास है। आधुनिक भौतिकतावादी जीवन संघर्ष के चक्रव्यूह को सफलतापूर्वक पार करने के

रहस्यों को अपने में समेटे यह पुस्तक विभिन्न जीवन शैली के सभी स्तर के पाठकों के लिए उपयोगी सिध्द होगी और पाठक इससे आवश्य लाभान्वित होंगे।

-मन्जु कुलश्रेष्ठ
बी-1291, इन्दिरा नगर, लखनऊ।

अनुक्रमणिका

भूमिका 1
आभार 6
1. मित्र, शत्रु और तटस्थ सदा साथ रहेंगे 7
2. ईश्वर सदा सत्य है, उस पर आधारित बनो 11
3. विग्रह से बचिये 16
4. त्याग-तपस्या की संस्कृति अपनाकर आत्म-बल बढ़ायें 22
5. चुनौती स्वीकार करें 34
6. प्रार्थना 42
7. ब्रह्मचर्य 44
8. मुसीबत, कार्य और उनको निपटाना 52
9. शारीरिक स्वास्थ्य और तनाव 56
10. वर्तमान में जिओ 64
11. क्षमा करना सीखो 70
12. ध्यान योग और शवासन 73
13. सफलता का मूलमंत्र 76
14. जिहवा पर नियंत्रण का करिश्मा 77
15. Make up your Mind 78
16. कब्ज 79
17. धनाभाव 82
18. वो हार कर भी जीते, हम जीत कर भी हारे 85
19. भोजन और नियमितता 88
20. पाजिटिव अथार्त सकारात्मक सोच - सही सोच 91
21. संगीत 93
22. नींद 95
23. व्यस्तता 97

24. अलमस्त, यायावर और घुमन्तू बनें 98
25. इनसे रहिये सावधान 100
26. अन्त में कहना है कि..... 104

भूमिका

जिन्दगी की भागदौड़, आपाधापी, खींचातानी - नतीजा, तनाव। अब न आप भागदौड़ कम कर सकते हैं और न ही खींचातानी और आपाधापी को जिन्दगी से निकाल कर फेंक सकते हैं। यह सब तो जीवन का अंग बन चुके हैं। इनसे अलग रहकर तो इस दौर में जिया नहीं जा सकता है। परिणाम अनुकूल न आये तो तनाव, बिजनेस में बकाया पैसा वसूल न हो तो तनाव, नौकरी में बॉस ने कुछ कह दिया, सहकर्मियों ने काम में अड़ंगा लगा दिया तो तनाव, पड़ोसियों से अनबन, पति पत्नी के बीच बढ़ती मानसिक दूरियाँ, नाते रिश्तेदारों के बीच बढ़ते उभरते मतभेद, बच्चों का अपने कैरियर के प्रति लापरवाह रहना, आकण्ठ भ्रष्टाचार में डूबे सरकारी दफ्तरों में काम कराना, माफियाओं और छुटभैया बदमाशों के चंगुल में पड़ना, जातिपरस्तता, धर्मान्धता, भाई-भतीजावाद, गुटबाजी, बेरोजगारी, हारी-बीमारी, भीड़ शोरगुल, प्रदूषण, बेईमानी, बेवफाई, तानें-छींटाकशी, घर की कलह, मुकदमा-कचहरी, ज़र-जमीन, जोरू, थाना-पुलिस, अस्पताल आदि का चक्कर इत्यादि भाँति भाँति कारणों से उत्पन्न तरह-तरह के तनाव और इन तनावों के बीच में आप अकेले, बिल्कुल अकेले।

क्या ऐसा कुछ हो सकता है कि तनाव हो ही न और अगर हो जाये तो उसे सहजता से दूर किया जा सके, बिना किसी साईड इफेक्ट के। डायबिटीज, ब्लड प्रेशर, हार्ट एवं पेट के कई रोग तनाव के कारण भी उत्पन्न हो जाते हैं। उनका इलाज चलता रहता है, लेकिन वे जड़ से खत्म होने का नाम ही नहीं लेते हैं। क्योंकि इसकी जड़ तो तनाव है और तनाव दूर नहीं होता, बराबर बना रहता है। इन्सान की सोच इन तनावों के पीछे बहुत हद तक जिम्मदार होती है। **आपकी बुनियादी सोच यानी मौलिक सोच कुछ है भी अथवा नहीं, यदि नहीं, तो आप तनाव का शिकार होंगे, और अगर वह है किन्तु भौतिकता पर आधारित है, तो भी आप तनाव के शिकार होंगे।** लेकिन आप तनाव के शिकार नहीं होंगे यदि बुनियादी सोच इस सच्चाई पर आधारित है कि जो कुछ होने वाला है या हो रहा है अथवा हो चुका है, वह सब ईश्वर की मर्जी है, उसकी मर्जी के बिना पत्ता भी नहीं हिलता। दूसरी यह कि, हम जो करते हैं, हमें लगता है कि हम करते हैं, पर वास्तव में ऐसा है नहीं। वह सब ईश्वर ही हमारे-आपके माध्यम से कर रहा है। यही कारण है कि अपनी उम्र के ईश्वर द्वारा निर्धारित पड़ाव पर पहुँच कर ही दुनिया के महान कहलाने वाले व्यक्तियों को लोगों ने जाना, वरना उससे पहले उनकी भी गिनती मात्र साधारण व्यक्तियों में ही थी। जैसे मोहम्मद साहब, गाँधी जी

आदि। और दुनिया के बड़े बुदध्मिान, होशियार, समर्थवान कहलाने वाले व्यक्ति, जो हर विपरीत परिस्थिति को भी चुटकी बजाते अपने पक्ष में कर लेने में माहिर थे, अपनी उम्र के ईश्वर द्वारा निर्धारित पड़ाव पर पहँचकर नेस्तनाबूद हो गये। उनका वह बुद्धि, बल, वैभव, उनकी वह समर्थता, जिसका डंका बजता था, बिल्कुल नकारा हो गये। जैसे रावण व हिटलर आदि। यहाँ एक बात और है, और वह यह कि, कोई यह न कहे कि साहब, मैंने फलाँ अकल दौड़ाई तो मेरा फला काम हो गया अथवा यह कि मेरे दम का जहूरा था कि मैंने चुटकी बजाते उसको उल्टा कर दिया वरना और किसी में यह दम नहीं था कि यह काम कर पाता। जनाब इस भूल में न रहिये। दुनिया के महान से महान कहलाने वाले और ऐसा भी व्यक्ति जिनके नाम से भी दुनिया काँपती थी, वे भी, उस समय जब उनका डंका बज रहा था, दुनिया छोड़ चले या परास्त हो गये। उनका नाम आज लोग जानते हैं लेकिन कल, जब यह दुनिया पलटेगी, उन्हें भी कोई न जानेगा ऐसे ही न जाने कितने ही महान से महान और शातिर से शातिर हुए होंगे जिन्हें कोई नहीं जानता। ये सूरज, ये चाँद, ये तारे, ये ग्रह, ये नक्षत्र, ये धरती और ये आकाश, सब उसकी मरजी है। ये मोहम्मद साहब, ये गौतम, ये गाँधी, ये ईसामसीह, ये गुरू नानकदेव आदि सब उसकी मरजी थे। इनमें से किसी की भी कोई हस्ती नहीं। हस्ती है तो केवल उसकी, उस अल्लाह की उस खुदा की उस ईश्वर की जो सदा थी सदा रहेगी और जो विभिन्न नामों से, विभिन्न रूपों में अरबों खरबों वर्ष पूर्व भी, आज और अरबों वर्ष बाद आगे भी हमेशा हमेशा जाना जाता रहा है और जाना जाता रहेगा। और इस भूल में न रहिये कि हम ज्यादा विद्वान हैं इसलिये हम औरों के मुकाबले में उसे ज्यादा जानते हैं। उसके नूर को पशु-पक्षी तक जानते हैं। सजीव निर्जीव सभी उसे जानते हैं। जर्रे-जर्रे में वह समाया हुआ है। वह हर बात से, हर चीज से ऊपर है, चाहे वह समय अर्थात काल ही क्यों न हो। बाकी सब काल के गर्त में समा जाते हैं। वही और केवल वही है। सबकी हस्ती बनाने वाला वही है। काल भी उसके अधीन है। दुनिया की महान हस्तियाँ कुछ नहीं केवल उसकी मेहरबानी हैं। किसी की भी कोई हस्ती नहीं, चाहे वह अदना हो या बड़ा। कोई कुछ है तो वह अपने बल पर नहीं बल्कि उसकी मरजी पर है। उसकी मरजी न हो तो सेकेण्ड भी नही लगेगा नीचे आने में। कोई चाहे कितना ही शक्तिशाली क्यों न हो। बिना उसकी मरजी के कोई आपका कुछ न बिगाड़ पायेगा। इसलिये किसी बात की चिन्ता या किसी बात का शोक न करों, क्योंकि आप नहीं करते हैं, नही ही कोई दूसरा कुछ करता है, करने वाला तो ईश्वर है। सब कुछ उसी का है तथा जो कुछ करेगा वही करेगा और वह जो करेगा हमारे अच्छे के लिए ही करेगा। हो सकता है कि यह बात तुरन्त समझ में न आये लेकिन कुछ समय बीत जाने पर समझ में आ जायेगी। वह हमसे ज्यादा हमारा खैरख्वाह है। इस सत्य को स्मरण करते रहो। कबीर दास जी ने भी कहा है-

दु:ख मा सुमिरन सब करै, सुख मा करै न कोय,

जो सुख मा सुमिरन करै तो दु:ख काहे को होय।

वास्तव में सुख-दुख में अर्थात हमेशा सुमिरन की जो बात कही गयी है, वह इसी सत्य को ही बराबर याद रखने की बात है कि सब कुछ उसी का है और सब ईश्वर ही करता है वरना हमारी या किसी की भी कोई हस्ती नहीं कि कुछ कर सके। सब उसकी मरजी है। वही और केवल वही सत्य है। इस सत्य को दिमाग में बिठा लो, तमाम तनावों से बच जाओगे।

जिस क्षण किसी कार्य को हम, स्वयं का किया हुआ अथवा किसी दूसरे का किया हुआ मान लेते हैं, उसी क्षण हम सुख-दु:ख के दायरे में आ जाते हैं। किन्तु जब ऐसी सोच मन में नहीं रहती तब हम तनाव मुक्त रहते हैं।

इस प्रकार जो तीसरी बात है, वह यह कि निष्काम कर्म की सोच जो आपको सुख-दु:ख से परे ले जाती है और आपको तनाव से दूर रखती है। यदि इस प्रकार आपकी मौलिक सोच, आत्मिक सोच है और वह सुदृढ़ है तो नि:संदेह आप तनाव के शिकार नहीं हो सकते हैं। प्रस्तुत पुस्तक इसी बिन्दु पर आधारित है।

जिस तरह हमारे शरीर के रग-रग में रक्त नलिकाओं का एक जाल बिछा हुआ है, ठीक उसी तरह स्नायुओं अर्थात दिमाग को सूचना पहँचाने वाली नलिकाओं का जाल भी महीन महीन सफेद धागों के रूप में शरीर के पोर-पोर में बिछा हुआ है। इन धागों में खून नहीं बहता है, वरन विभिन्न रूपों में सूचनायें इनसे प्रवाहित होकर मस्तिष्क में पहुँचती हैं, जैसे आँखों से दृश्य के रूप में, कानों से स्वर के रूप में, नाक से गन्ध के रूप में, त्वचा से स्पर्श के रूप में इत्यादि। मस्तिष्क इन्हें ग्रहण कर अपनी प्रतिक्रिया देता है जो हमें अच्छी अथवा खराब लगती है। आपने महसूस किया होगा कि कभी कभी हम किसी ध्यान में इतना अधिक तल्लीन हो जाते हैं कि हमारा ध्यान पूरी तरह दूसरी ओर होता है। ऐसी स्थिति में सामने वाला व्यक्ति भी सोचता है कि जनाब ने देखकर भी नमस्कार का जवाब नहीं दिया वास्तव में होता यह है कि आँखों मे तो सामने वाले की तस्वीर पड़ रही है परन्तु विचारों का केन्द्र मस्तिष्क दूसरे विचार में होने के कारण आँखो में पड़ रही उस तस्वीर अर्थात आँखों द्वारा लायी गयी सूचना के बारे में विचार नहीं कर पाता किन्तु जिस क्षण मस्तिष्क का ध्यान पहले से चल रहे विचार से हटेगा और वह सामने की तस्वीर के बारे में विचार करेगा तो तत्क्षण उसे अपनी गलती का अहसास होगा। इसी प्रकार आपने यह भी अनुभव किया होगा कि किसी ध्यान में होने के कारण यदि किसी चिनगारी पर हाथ पड़ जाये या वह शरीर को छू जाये अथवा उस समय जब मस्तिष्क कहीं और है तो कोई सूई हलके से चुभो दें तब यह तत्क्षण अनुभव नहीं हो पाता वरन कुछ क्षण पश्चात मालूम होता है और हम झटके से हाथ हटा लेते हैं। क्योंकि स्पर्शेन्द्रियों द्वारा पहुँचायी गयी सूचनाओं पर मस्तिष्क, दूसरी तरफ व्यस्त होने के कारण उसे तत्काल ग्रहण नहीं कर सका। डाक्टरों द्वारा दी जाने वाली तमाम दवाईयाँ इसी प्रकार मस्तिष्क के सम्बन्धित विचार केन्द्र को सुन्न कर व्यक्ति को

तनाव-मुक्त करने का प्रयास करती हैं, जिसके गम्भीर साइड-इफेक्ट भी होते है। किन्तु फिर भी मनुष्य मस्तिष्क से सम्बन्धित विचार-केन्द्र के सुन्न रहने की स्थिति तक ही तनाव-मुक्त रह पाता है और बार-बार अपनायी गयी इस जबरदस्ती वाली प्रक्रिया से विक्षोभित होकर मस्तिष्क किसी नयी बीमारी को भी जन्म दे देता है। इस प्रकार डाक्टर वास्तव में फौरी इलाज तो कर सकता है परन्तु स्थायी इलाज नहीं। यदि तनाव हो गया है और बना हुआ है तो मस्तिष्क का ध्यान सहज एवं प्रकृतिक ढंग से दूसरी ओर ले जाने के दूसरे भी अनेक उपाय हैं जो तनाव-मुक्त होनें में हमारी सहायता कर सकते हैं और इन्हें अपनी आवश्यकतानुसार हम चुन सकते हैं। इनके कोई साइड-इफेक्ट भी नहीं हैं। लेखक की अन्य पुस्तक जो कि **"तनाव-मुक्त जीवन की राह"** के नाम से है, इसी तथ्य पर आधारित है।

इसके अतिरिक्त वह सोच जिसके कारण हम तनाव-ग्रस्त होते हैं, के स्थान पर यदि इस पुस्तक में निहित कोई सोच आपकी आवश्यकतानुसार आपके मस्तिष्क में प्रतिस्थापित हो जाती है तो वह आपके तनाव को जड़ से दूर कर सकती है। क्योंकि स्नायु-तन्त्र के सफेद धागों द्वारा ग्रहण कर मस्तिष्क में पहुँचायी गयी सूचनाओं को जब मस्तिष्क ग्रहण करता है तो मस्तिष्क अपने में पूर्व संचित या स्थापित मौलिक सोच के आधार पर परिणाम बनाता है और उससे ही हम तत्क्षण सन्तोष, असन्तोष, सुख-दु:ख आदि अनुभव करते हैं। यही नहीं, मस्तिष्क की इसी प्रतिक्रिया से प्रभावित होकर मनुष्य कर्म करता है जो तत्काल या कुछ समय पश्चात अथवा बहुत समय व्यतीत हो जाने पर फलदायी होकर मनुष्य को सन्तोष-असन्तोष, सुख-दु:ख आदि देने वाला बनता है। अत: स्पष्ट है कि हमारी बुनियादी सोच, यदि भौतिक है और वह आत्मिक और सुदृढ़ नहीं है तो वह हमारे तनाव-ग्रस्त होने में काफी हद तक जिम्मेदार है। आत्मिक-सोच को ही इस पुस्तक में निरूपित करने का प्रयास किया गया है। ईश्वर करे कि यह पुस्तक आपको तनाव-ग्रस्त होने से बचाने में तथा तनाव-मुक्त करके, तनाव-मुक्त रखने में आपकी सहायक बने। यही इसकी सार्थकता है।

-अजय वैश्य

आभार

प्रिय पाठकों का अपने जीवन में कैसा अनुभव रहा है, यह तो मुझे ज्ञात नहीं है। किन्तु मेरे पुस्तक लेखन के पथ को "खलों" ने ही प्रशस्त किया है। इसलिये सर्वप्रथम मैं उन्हीं का आभारी हूँ।

रही बात मित्रों, सहयोगियों, शुभाकांक्षियों तथा पात्रों की, तो यह एक लम्बी कड़ी है, जिनका आभार व्यक्त करके भी मैं उनसे उऋण नहीं हो सकता हूं।

बात अधूरी रह जायेगी यदि मैं अपने बड़े भाई समान मित्र श्री मोहन लाल श्रीवास्तव, 'अनुज प्रिन्टर्स के मुखिया आदरणीय श्री एस.के. श्रीवास्तव साहब एवं भाई श्री मुकुल राज जी तथा सुसहायक श्री सदाशिव तिवारी जी का आभार व्यक्त न करूँ जिनके उदार सहयोग से यह पुस्तक छप सकी। मैं आप सबका ह्दय से आभारी हूँ

बेटी जयन्ती गुप्ता, एडवोकेट जिन्होंने इस पुस्तक के प्रकाशन एवं वितरण की जिम्मेदारी सँभाली है, का भी मैं कृतज्ञ हूँ।

-अजय वैश्य

1. मित्र, शत्रु और तटस्थ सदा साथ रहेंगे

यह एक सच्चाई है। इसे झुठलाया नहीं जा सकता है। अत: इस सोच को ध्यान में रखने से यह होगा कि आप जीवन में सदैव फेस करने के लिए तैयार रहेंगे।

मेरे साथ ही ऐसा क्यों है, क्यों है कि चारों ओर शत्रु ही शत्रु हैं। हैं तो हुआ करें, मैं मुकाबला करूंगा, अन्तिम साँस तक मुकाबला करूंगा। यह तो जीवन में है ही। देखो, ये रैली में जा रहे लोग, क्या नारे लगा रहे हैं- "जीना है तो मरना सीखो, कदम-कदम पर लड़ना सीखो" सच ही तो है, क्या बिना फाइट किये भी इस जीवन में रहा जा सकता है मुरदे को देखो कोई फाइट नहीं करता है, चुपचाप हो जाता है, किसी से भी तो नहीं भिड़ता। लेकिन फिर भी चील-कौवे उसे खा जाना चाहते हैं। कीड़े एक के बाद एक आते हैं और मुरदे को सड़ा गला देते हैं, क्यों- क्योंकि उसकी गरमी खत्म हो गयी है। जब तक गरमी थी, भला इनमें से किसकी हिम्मत थी जो उसे छू भी सकता।

आपने वह कहानी नहीं सुनी जिसमें एक गाँव के किनारे एक अत्यन्त प्राचीन वट-वृक्ष की खोह में एक भयानक काला नाग रहता था और अक्सर उधर से निकलने वालों को काट लिया करता था। इस कारण कई एक मौतें हो चुकी थीं। गाँव-वालों ने अनेक उपाय किये। एक प्रसिद्ध सपेरे को भी बुलवाया गया। उसने मौका-मुआयना किया, फिर उस साँप को पकड़ने पर राजी न हुआ इससे पहले भी कई सपेरे आकर लौट गये थे। लोगों ने उस सपेरे को पानी पर चढ़ाया, कहा- बड़ा नाम सुना था तुम्हारा, लेकिन तुम भी यूँ ही निकले, जब असल मुकाबला सामने आया तो भाग खड़े हुए। सपेरा समझ गया कि लोग आसानी से मानने वाले नहीं हैं। उसने उस बरगद के पेड़ से लगभग 50 फीट की दूरी पर एक लम्बी बाँस की लग्घी गड़वायी जिसके सिरे पर पुराना गूदड़ लटका था। वहीं बैठकर सपेरे ने बीन बजाना शुरू किया। हवा का रूख बरगद की ओर था। बीन की तीखी और तेज-ध्वनि उस नीरव वातावरण को झंकृत करने लगी। सपेरा भी गजब का था एक-दो-तीन और यहाँ तक कि चार घण्टे बीत गये। काफी दूर खड़े, डरे-सहमे, दूर-दूर से इस तमाशे को देखने आये गाँव-वालों में आपस में सुगबुगाहट होने लगी कि अभी तक काला-सर्प बाहर क्यों नहीं

निकला। कोई कहता ऐसे सर्प अतीन्द्रिय होते हैं। अन्दर बैठे-बैठे बाहर का हाल जान लेते हैं। कोई कहता सो रहा होगा, तो आखिर कितना सोयेगा, खोह के अन्दर आवाज तो जाती ही होगी, कोई कहता यह दिन में नहीं रात में निकलता है, तो कोई बताता कि रामदीन की मेहरिया को दिनहि मा काटिस रहै। किसी का कहना था पावस (वर्षा ऋतु) के समय अगर यह कार्यक्रम किया जाता तो अब तक नाग बाहर निकल आया होता। कोई-कोई यह भी कह रहे थे कि कहीं छोड़कर अन्यत्र तो नहीं चला गया। हाँ, आप भी कैसी बात करते हैं। इतना पुराना अड्डा, अभी तक छोड़कर नहीं गया, अब छोड़कर चला जायेगा। लोगों में आपस की चर्चायें तेज हो चली थीं। लेकिन सपेरा था कि झूम-झूम कर बीन बजाये ही जा रहा था और इतनी दूर से भी इस सरदी में उसके माथे पर पसीने की बूँदे झलकती हुई साफ दिखलायी पड़ रही थीं। सूर्य की किरणें हलकी पड़ गयी थीं और शाम हो रही थी कि तभी अचानक एक विशालकाय और अत्यन्त भयंकर काला-सर्प पलक झपकते उस गहरी खोह से बड़ी तेजी से निकलकर बाहर आ गया और आते ही फन काढ़कर बहुत तेजी से उसने ऊपर मुँह कर लग्घी पर लटके गूदड़ की ओर फुफकारा। उसके फुफकारते ही गूदड़ धू-धू कर जलने लगा। जैसे किसी ने मिट्टी का तेल डालकर उसपर दियासलाई की जलती तीली डाल दी थी।

सपेरा अपनी बीन वहीं छोड़कर उलटे पैर भागा। लोगों में भगदड़ मच चुकी थी। भागते लोगों ने गाँव के अन्दर पहुँचकर दम लिया। सपेरा भी लोगों के साथ भागते हुए गाँव आया। लेकिन यह क्या, वह तो गश खाकर गिर पड़ा। लोगों ने उसके मुँह पर ठण्डे पानी के छीटें दिये। तब जाकर उसे होश आया। होश में आते ही उसने लोगों से कहा कि वे उधर जाने से तौबा कर लें।

समय गुजरता गया। लोग उधर जाना भूल गये। कुछ काल-पर्यन्त एक महात्मा गाँव पधारे। जब वे जाने लगे तो लोंगो ने बताया कि उस रास्ते से नहीं, इस रास्ते से जाना। महात्मा जी ने कारण पूछा तो लोगों ने कारण बताया। लेकिन महात्मा जी नहीं माने। लोगों के लाख मना करने पर भी वे उसी रास्ते से जाने लगे जिधर जाने से लोगों ने मना किया था। महात्मा जी को साथ छोड़ने जाने वाले लोग भी ठिठक कर लौट पड़े। महात्मा जी अत्यनत श्रेष्ठ पुरूष और सन्त थे और साथ ही अतीन्द्रिय भी। उस वट-वृक्ष के पास पहुंचकर वे वहाँ रूके और अपनी अतीन्द्रिय विद्या के बल पर उस सर्प का आहवान किया। सर्प बाहर निकलकर आया। महात्मा जी ने उससे बातें की और उसे मना किया कि अब भविष्य में वह किसी को नहीं काटेगा। सर्प ने महात्मा जी की बात मान ली। उसने महात्मा जी को वचन दिया कि वह अब किसी को नहीं काटेगा। महात्मा जी ने गाँव आकर लोगों से कहा कि वे निर्भय होकर उस रास्ते से जा सकते हैं। सर्प अब किसी को नहीं काटेगा। कुछ लोग हिम्मत करके महात्मा जी के साथ गये। देखा कि सर्प चुपचाप पड़ा है। धीरे-धीरे लोग उस रास्ते से

आने-जाने लगे। दिन बीतते गये। लोगो को वह सर्प वहाँ अक्सर दिखायी पड़ जाता किन्तु सर्प दिखलायी पड़ने पर भी चुपचाप पड़ा रहता।

इस संसार में कुछ दुष्ट प्रकृति के लोग होते ही हैं। सज्जनता उन्हें फूटी आँख नहीं सुहाती। दुष्टता उनकी रग-रग में रहती है। फिर क्या था, ऐसे ही कुछ लोग आते-जाते दूर से उस सर्प पर पत्थर फेकने लगे। सर्प अपना बचाव कर खोह में घुस जाता किन्तु फिर भी यदा-कदा कुछ-एक नुकीले पत्थर उस पर पड़ ही जाते थे।

एक मुद्दत बीत गयी। वही महात्मा जी फिर उस गाँव में आयें। जाते हुए उन्होंने सोचा कि चलो उस सर्प का भी हाल लेते चलें। वहाँ पहुँचकर उन्होंने देखा कि सर्प लहू-लुहान पड़ा है। महात्मा जी ने पूछा कि वत्स, ऐसी स्थिति में कैसे पहँच गये। सर्प ने उत्तर दिया कि महात्मा जी, आपको दिये वचनों का पालन करते करते मेरी ऐसी हालत हो गयी है। मैंने लोगों को काटना बन्द कर दिया। तब सारा हाल सुनकर, महात्मा जी ने कहा- वत्स, मैंने तुम्हे काटने से मना किया था, फुफकारने से नहीं।

वचन-बद्ध्ता सज्जनो के प्रति होती है, दुष्टों के प्रति नहीं। सदैव साम, दाम, दण्ड, भेद में से , इन चारों को अपनाकर या इनमें से यथावश्यकता किन्ही का सहारा लेकर बुदिध्, बल के साथ शत्रु-भेदन के लिए तत्पर रहों, तत्पर दिखो, गरमी बनाये रखो, क्योकि आप चाहे कही भी रहें, शत्रु-मित्र और तटस्थ, इनसे आपका सबका सदैव रहेगा।

यह हवा है, कभी अत्यन्त ठण्डी, कभी अत्यन्त गर्म, तो कभी इसमें नमी ही नमी। इस अवस्था में, इस वातावरण में- टी.बी. के भी कीटाणु हैं, इन्फलूएंजा के भी, टायफएड के भी और अनेकानेक रोगों के भी कीटाणु हैं और इन सब के बीच हम सभी रहते है, लेकिन इनसे उन लोगों के प्रभावित होने की सम्भावना ज्यादा रहती है जो कमजोर होते हैं और जिनमें रोग-प्रतिरोधक क्षमता कम होती है। यह कीटाणु भी ऐसे कमजोर लोगों पर हावी हो जाते हैं। ऐसी ही यह दुनिया है, यहाँ कमजोरी अभिशाप है। प्रकृति भी कमजोरों को जिलाये रहने के पक्ष में नहीं होती। इसीलिये शक्ति हासिल करो। बली बनने हेतु निरन्तर प्रयत्न करके 1-आत्म-बल, 2-शरीर-बल, और 3-समाज-बल बनाये रखो, अन्यथा लोग आपको जीने न देंगे। आप अपने धर्म का पालन भी उपर्युक्त गरमी के बने रहते ही कर सकेंगे। गीता में भी भगवान श्रीकृष्ण ने कहा है- धर्मक्षेत्रे, कर्मक्षेत्रे, समावेत: युयुत्सव:। भाव यह है कि यह संसार महाभारत के कुरूक्षेत्र की भाँति कर्म के युद्ध का मैदान है। यहाँ कर्म-युदध् तो करना ही पड़ेगा और कोई चारा नहीं है। अत: कर्म-युद्ध की सतत भावना के साथ धर्म के अनुसार कर्म की इच्छा रखते हुए कर्म-युद्ध कीजिये।

आप देखेंगे कि अपने को ऐसा बना लेने से आपके शत्रु आपसे टकराने में हिचकेंगे। बिना मुकाबला किये चुपचाप जीने की बात अपने जेहन से निकाल फेंको, बल्कि मस्तिष्क में ऐसी सोच बनाओं कि जीवन के हर क्षेत्र में मुकाबले से आपको पीछे नहीं हटना है, अपनी अन्तिम साँस तक आप संघर्ष करेंगे, एक बहादुर सिपाही की तरह। सदैव ठण्डे

मस्तिष्क से काम लो कि आपको अगर सम्मान से जीना है तो आत्मा में, तन में और समाज में सदैव अपनी उपस्थिति दर्ज कराकर रखो, ताकि मित्र आपकी सहायता करने से हिचकें नहीं और शत्रु आपके मार्ग में आने से हिचकें।

२. ईश्वर सदा सत्य है, उस पर आधारित बनों

क्यूँ? आखिर क्यूँ, व्यर्थ के झँझटों में फँसे हो। उस ईश्वर पर आधारित बनो, जिसकी मर्जी के बगैर पत्ता भी नहीं हिलता। आपको पता है। इस संसार में अरबों पत्ते हैं उनमें से एक भी पत्ता गर हिला और वह यूँ नहीं, यूँ हिला तो यूँ - अर्थात इस प्रकार, हिलना भी उसकी मर्जी है तो फिर आपकी बिसात ही क्या है। इस समूचे ब्रह्मांड में बिना उसकी मर्जी के कुछ हो ही नहीं सकता। इस सत्य को सदैव गाँठ से बाँधकर रखो।

सोचो जरा, कि इस संसार में क्या सत्य है? क्या यह संसार सत्य है, ये सांसारिक बातें सत्य हैं? नहीं ये सत्य नहीं हैं, क्योंकि ये पहले नहीं थीं और आगे भी नहीं रहेंगी। इस संसार का कभी जन्म हुआ था और कभी इसका अन्त हो जाना भी निश्चित है अर्थात यह न रहा था और न रहेगा। यह चाँद, तारे और ये सूर्य जो कभी बने थे, एक दिन मिट जायेंगे। केवल एक ईश्वर ऐसा है जो हर काल में रहेगा। हाँ, वह काल अर्थात् समय से भी उपर है। इसलिये ईश्वर ही सत्य है। दुनिया के सारे धर्म इस सत्य की ओर ही संकेत करते हैं और हिन्दू धर्म में तो आज भी मुर्दे की अर्थी ले जाते समय इस सत्य को दुहराते चलते हैं 'राम नाम सत्य है अर्थात मात्र ईश्वर ही सत्य है, देखो यह मनुष्य भले ही कितना ही प्रभावशाली क्यों न रहा हो, सत्य नहीं था।

इस परम सत्य को स्वीकार करो पूरे मन से, तभी मन की शान्ति है, अन्यथा कहीं भी और किसी भी प्रकार शान्ति न मिलेगी, क्योंकि सत्य से अर्थात सच्चाई से अलग रहकर भला मन कैसे शान्ति पा सकता है? वह भटकता ही रहेगा। आपको कभी चैन न लेने देगा।

यह भी अच्छी तरह जान लो कि वही मात्र ईश्वर ही सब कुछ करता है, आप तो मात्र निमित्त बने हुए हैं। तभी भगवान श्री कृष्ण ने गीता में अर्जुन से कहा है कि हे अर्जुन तू जो कुछ भी कर मुझको अर्पित करता चल और ऐसा करने से तुझे कोई पाप नहीं लगेगा। इसका अर्थ क्या है? इसका अर्थ यह है कि जब ईश्वर ही सब कुछ करता है और तू कुछ करता ही नहीं, तो फिर तुझे क्यों पाप लगेगा। तू क्यों जिम्मेदार होगा अर्थात तू यह मानकर कर्म करेगा कि ईश्वर ही सब जीवों में कर्म करता है और तेरी या किसी की भी औकात नहीं कि वह कुछ कर सके तो जो कुछ हो रहा है वह ईश्वर की मर्जी से हो रहा है। ऐसी सच्चाई जब मन में रहेगी तो तू शोकरहित रहेगा। तुझे सुकून मिलेगा। मन में शन्ति रहेगी। अपने

कर्तव्यों को तू शान्ति से और भलीप्रकार पूर्ण करने में सक्षम हो सकेगा। आपका आत्मविश्वास जगेगा। सफलतायें कदम चूमने लगेंगी।

ईश्वर की मर्जी के बिना कुछ भी नहीं हो सकता और यदि ईश्वर चाहे तो सब कुछ हो सकता है। इस सच्चाई को मन में उतार लो। सदैव सुखी रहोगे सुकून से रहोगे।

मन-मस्तिष्क और आत्मा को मिला देने वाली सच्चाई की यह डोर, विश्वास की यह डोर, आप जितनी मजबूती से पकड़ेंगे, निस्संदेह ईश्वर आपके उतना ही करीब होगा और फिर जब ईश्वर साथ में है तो विजय आपकी है। यह निश्चित है। अर्जुन ने इस सत्य को जान लिया था। तभी भगवान श्रीकृष्ण ने जब यह कहा कि एक तरफ मैं रहूँगा और वह भी निहत्था तथा दूसरी ओर मेरी शस्त्र सज्जित चतुरंगिणी सेना रहेगी। तो दुर्योधन ने एक अत्यन्त बुदिध्मान और चतुर व्यक्ति जैसे कि आजकल के अधिक ज्ञान सम्पन्न समझे जाने वाले व्यक्ति होते हैं, की भाँति आचरण करते हुए चतुरंगिणी सेना भगवान श्रीकृष्ण से माँग ली। क्योंकि दुर्योधन को दुनिया पर विश्वास था, बुदिध पर विश्वास था, किन्तु ईश्वर पर नहीं।

हाँ ऐसा ही होता है। अपने मस्तिष्क पर विश्वास है, बुदिध-बल से किये गये तर्कों और प्रयोगो पर आधारित निष्कर्षों पर विश्वास है, किन्तु ईश्वर की सच्चाई पर विश्वास नहीं है। हम यह भूल जाते हैं कि गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने कहा है कि ईश्वर इन्द्रियों के परे है। हम अपने तर्कों से उन्हें कभी नहीं पा सकते। मनुष्य इतना ही बुदिध्मान है तो क्यों नहीं ब्रह्मांड के ओर-छोर अर्थात दो सिरों को, वास्तविकता तो दूर, कल्पना में भी क्यों नहीं पकड़ पाता है। जब वह अपने मस्तिष्क से ब्रह्मांड का सिरा कल्पना में भी नहीं सोच पाता है तो भला ईश्वर को जिसके अधीन समस्त ब्रह्मांड है अपने मस्तिष्क से कैसे प्राप्त कर सकता है। अर्जुन ने इस तथ्य को समझा था, वे ह्दय के अत्यन्त सरल थे। सरलता में ईश्वर निवास करते हैं। महाभारत के युद्ध में ईश्वर अर्जुन के साथ थे, अन्ततः अर्जुन की विजय हुई। ऐसी ही एक सफलता का उदध्रण हम और पेश करते हैं। अल्लाह पाक का एक फरिश्ता इस दुनिया में आकर एक बहुत बड़े आलिम (विद्वान) से मिला, जिन्होंने सदा पाँचों वख्त की नमाज अदा की थी और तीसो रोजे भी रहे थे। फरिश्ते ने उन आलिम साहब से सवाल किया कि क्या सूई के छेद से ऊँट गुजर सकता है। सवाल का पूछना क्या हुआ कि जनाब आलिम साहब ने फौरन छूटते ही फरिश्ते साहब के सवाल पर ही सवालिया निशान लगा दिया कि जनाब आप इतने आलिम होते हुए भी कैसी जाहिलों जैसी बातें करते हैं। भला ऐसा भी कभी हो सकता है कि सूई के छेद में से ऊँट पार हो जाये? फरिश्ता इतने बड़े आलिम की बात सुनकर आगे चल दिया। रास्ते में उन्हें एक शराबी दिखलायी पड़ा जो उस वख्त पूरे होशो-हवास में था। फरिश्ते ने वही सवाल उस शराबी से पूछा। शराबी ने जवाब दिया कि हाँ हुजूर अगर अल्लाह पाक चाहे तो सूई के छेद में से भी ऊँट पार हो सकता है।

देखा आपने, जी हाँ, ऐसा भरोसा, ऐसा विश्वास, उस परम सत्य, उस परमेश्वर के प्रति रहने से आप दोजख की आग से बचे रहेंगे। मस्त रहेंगे। मन-मस्तिष्क तनावों से ग्रसित

नहीं रहेगा वरन प्रफुल्लित रहेगा। चिन्तायें परेशान न करेंगी।

जब मन इस सच्चाई को समझेगा कि जो कुछ भी हो रहा है, वह प्रभू की इच्छा से हो रहा है, बिना उसकी इच्छा के न तो मित्र आपकी मदद करेंगे, ओर न ही शत्रु आपका कुछ बिगाड़ सकेंगे। भले ही वे कितने ही शक्तिशाली, बुदिध्मान व चालाक क्यों न हों। ऐसी सच्चाई जब आप मन में लायेंगे तो मन में धीरज रहेगा। मन खिन्नता और परेशानी से बचा रहेगा। आप आज यदि ये समझते है कि अमुक शत्रु के कारण आपका यह अपकार हुआ है तो वास्तव में यह सही नहीं है क्योंकि आने वाला समय आपको यह बतलायेगा कि उस समय शत्रु के द्वारा जो विरूद्ध कार्य किया गया था यदि वह न किया गया होता तो उस क्रम में या उस क्रम से जो स्थिति आज आपकी बनी है और जो आपके लिये श्रेयस्कर है, वैसी श्रेयस्कर न होती यदि उस शत्रु ने उस समय वैसा विरूद्ध कार्य न किया होता। क्योंकि वास्तव में जिस विरूद्ध कार्य को आप शत्रु द्वारा किया गया मानते हैं, वह शत्रु द्वारा नहीं किया गया वरन ईश्वर की इच्छा से ही हुआ और बिना उसकी इच्छा के कोई कुछ नहीं कर पाता है तथा ईश्वर जो भी करता है, अन्ततः अपने बन्दों की भलाई के वास्ते ही करता है। जरा अपने पिछले जीवन की घटनाओं की कड़ियों को मिला कर देखो, तो आप यही पाओगे कि जो कुछ उस समय हुआ था वह उस समय बहुत खराब जरूर लगा लेकिन आखिरकार उससे आपका बाद में हित ही हुआ और यदि वह जिसे आपने उस समय खराब समझा और जिससे आपको कष्ट भी हुआ था न हुआ होता तो आपका वह हित जो उस कारण से ही सम्भव हुआ, न हो पाता। विष के ये कडुए प्याले हमें व्यर्थ में नहीं दिऐ जाते। कालान्तर में यह बात समझ में आ सकेंगी। अपनी आँखों के सामने से गुजरे सैकड़ों उदाहरणों में से एक उदाहरण आपके सामने पेश करता हूँ जिससे उपर्युक्त कथन और अधिक स्पष्ट हो सकेगा ।

हमारे घर के पड़ोस में एक शुक्ला जी रहते थे जो लगभग ११ वर्ष की उम्र से ही अमीनाबाद स्थित एक सेठ की कपड़े की दूकान में नौकरी करने लगे थे क्योंकि पिता थे नहीं मात्र माँ थी जो काफी गरीब थीं और कुछ ही वर्ष बाद वह भी चल बसी थीं। लगभग 15-16 वर्ष की उम्र में ही शुक्ला जी का विवाह उनके रिश्तेदारों ने करा दिया। धीरे-धीरे समय अत्यन्त गरीबी में बीतता गया और वे चार पुत्रियों और चार पुत्रों के पिता बने। परिवार का पालन-पोषण महागरीबी के बीच होता रहा। लड़के और लड़कियाँ सेठो के घर पर महाराज-महाराजिनों के रूप में भोजन बनाने जाते रहे। आस-पड़ोस और मोहल्ले वालों से एकत्रित किये गये चन्दे से तीन लड़कियों का विवाह सम्पन्न हो सका। अब तक शुक्ला जी लगभग 50 वर्ष के हो चुके थे लेकिन देखने में 75 वर्ष के लगते थे। इसी समय एक घटना हो गयी। शुल्का जी पर चोरी का इल्जाम लगाकर सेठ जी ने अपनी कपड़े की दूकान की नौकरी से उन्हें निकाल दिया। अभी भी एक विवाह योग्य पुत्री तथा तीन अविवाहित पुत्र उनकी जिम्मेदारी पर थे। शुक्ला जी के लिये यह अत्यन्त कठिन समय था। ईश्वर पर

आधारित उस कर्मठ पुरूष ने वैसी विषम स्थिति में भी हौसला नहीं गँवाया और इसे ईश्वर की इच्छा जानकार धैर्य से स्वीकार किया।

जोहि विधि राखे राम तेहि विधि रहिए
विधि का विधान जान, हानि-लाभ सहिये।

मोहल्ले के कुछ सह्रदय लोगों से थोड़ा-थोड़ा उधार लेकर तथा घर के कुछ बर्तन आदि बेचकर वह कानपुर से कुछ सस्ती साड़ियाँ लाकर घर-घर जाकर बेंचा करते थे। एक वर्ष तक इस प्रकार चलने के पश्चात साईकिल के कैरियर पर साड़ियों का एक गट्ठर बाँधकर अपने एक पुत्र के साथ वे मोहल्ले-मोहल्ले साड़ियाँ बेचते रहे। वृद्धावस्था व कमजोरी के कारण शरीर जवाब दे जाता था। अत: एक वर्ष के पश्चात अपने घर के पास ही वर्षों से बन्द पड़ी एक दूकान के चबूतरे पर साड़ियों का गट्ठर ले जाकर साड़ियों की बिक्री प्रारम्भ की। ईश्वर की कृपा हुई। उनका धन्धा चल निकला। धन देकर उन्होंने बन्द पड़ी वह दूकान खरीद ली जिसकेचबूतरे पर वह साड़ियाँ बेच रहे थे। उनकी दूकान दिन-दूनी रात-चौगुनी बढ़ने लगी। अपनी आखिरी लड़की की शादी शुल्का जी ने बड़े अरमान से एक धनाढ्य घर में की। कालान्तर में उनकी अपनी कोठी तैयार हुई। उनके ऊपर दिन-रात लक्ष्मी की कृपा बरसने लगी। उनके सामने सुख-वैभव का अम्बार लग गया। आज शुक्ला जी की गिनती धनाढ्य लोगों में है। वह सेठ जिसने शुक्ला जी को चोरी का इल्जाम लगाकर अपनी नौकरी से निकाल दिया था, उससे अब शुक्ला जी का मित्रवत व्यवहार है। आपने देखा की चोरी का इल्जाम जो कभी शुक्ला जी के लिए कलंक का कारण बना था, कालान्तर में वही शुक्ला जी के कल्याण का कारण बना। क्योंकि सब करा-धरा ईश्वर का ही होता है और ईश्वर जो भी करता है वह हमारे आपके भले के लिए ही करता है। इसलिये इस सच्चाई को जानो-समझो और व्यर्थ के झँझटों में न पड़कर ईश्वर पर आधारित बनो।

3. विग्रह से बचिये

मन चंगा तो कठौती में गंगा, मन के हारे हार है, मन के जीते जीत। इस मन को विग्रह से अर्थात ग्रहण से बचाईये। सूर्य को राहु ग्रस लेता है- सूर्य-ग्रहण। संसार में सूर्य के विना जीवन कल्पना कैसी? मन ग्रसित हो गया। ग्रसित मन के साथ जीवन की कैसी गति, गति नहीं दुर्गति। कभी मन क्रोध से ग्रसित है, कभी अहंकार, ईर्ष्या-द्वेष अथवा राग, विराग से ग्रसित। ग्रसित मन से कैसे कार्य होगा? होगा तो उसका फल क्या होगा। जीवन की उन्नति रूक जायेगी। जीवन पतन की ओर घूम सकता है। कैसे बचायें इस मन को विग्रह से?

जीवन की उन्नति और पतन में मन अहम भूमिका निभाता है, कैसे? मैंने एक रसगुल्ला खाया, बड़े स्वाद से। दूसरा खाने जा रहा था, उतने ही स्वाद से। मुँह में रसगुल्ला रखा ही था कि खबर आयी मेरे अत्यन्त प्रिय की एक दुर्घटना में मृत्यु हो गयी। मुँह मे रखे

रसगुल्ले में कोई स्वाद न रहा। मन भयंकर दु:ख से आच्छादित हो गया, जैसे जाड़े के मौसम में सूर्य बादलों से आच्छादित हो जाये। लेकिन बादल छटेंगे, आज नहीं तो कल। फिर से धूप खिलेगी। इस सत्य से इन्कार नहीं किया जा सकता है। जो इस सत्य को जानता है, वह अपने मन को पूरी तरह से ग्रसित हो जाने से बचाता है, अर्थात धैर्य धारण करता है। बड़ी से बड़ी आँधियाँ आती है, आप शान्त हो जाइये, उद्वेलित न हों, आँधी आयेगी, चली जायेगी। आपका कुछ नहीं बिगड़ेगा। बस धीरज से काम लीजिये, ऐसे मौकों पर मन को शान्त रखिये।

घर की बहू थोड़ा सा काम करके थक जाती थी। संयुक्त परिवार मे रहकर काम करने का उसका मन बिल्कुल न था। जबरदस्ती सबके साथ रहकर काम करना पड़ता था। संयुक्त परिवार से अलग होकर अपने पति के साथ रहने लगी दिन-रात काम करती फिर भी थकावट का नाम नहीं। काम मन से होता है मात्र शरीर से नहीं।

रावण रामचन्द्र जी की धर्म-पत्नी सीता जी का अपहरण कर उन्हें अपने साथ ले गया। रामचन्द्र जी को अत्यन्त शोक हुआ। मन शोक व क्रोध से ग्रसित हुआ। लेकिन शोक व क्रोध से नहीं वरन धीरज से उन्होंने काम लिया। शोक व क्रोध को मन में स्थायी नहीं होने दिया। अगर ये स्थायी होकर मन को ग्रसित कर लेते तो रावण के प्रति मन विग्रह से ग्रसित हो जाता और विग्रहयुक्त मन से महाप्रतापी रावण का वध असम्भव था। जिस तरह से वानर-भालुओं को एकजुट किया और उन्हें रावण जैसे अजेय के विरूद्ध खड़ा कर दिया, वह विग्रह से ग्रसित मन से कदापि सम्भव न हो पाता। विग्रहयुक्त मन, मस्तिष्क अर्थात बुद्धि को बन्द करके, बजाय शत्रु का हनन करने के, अपना ही नाश प्रारम्भ कर देता है। कई लोग मदिरापान कर गम गलत करना शुरू कर देते हैं, तो कोई-कोई सिगरेट आदि नशीले द्रव्यों का सेवन कर अपना व परिवार का पतन प्रारम्भ कर देते हैं, और कोई-कोई क्रोधवश शत्रु पर जो वार करते हैं, उससे स्वयं उनका ही नाश हो जाता है और शत्रु हँसते हैं। यह भी देखने में आता है कि कोई-कोई भयंकर चिन्ता क्रोध, द्वेष से अपने मन को आच्छादित कर उसी में दिन रात कुढ़ते रहने के सिवा कुछ भी नहीं कर पाते हैं। यह मन को विग्रह से ग्रसित कर लेने का ही परिणाम है कि जो आप कर सकते हैं वह भी करने से वंचित हो जाते है।

लेकिन भगवान राम ने ऐसा न कर उचित-अनुचित को ध्यान में रखकर बुद्धि-विवेक से काम लिया। मन में विग्रह अर्थात क्रोध व शोक को यह सोचकर दूर किया कि 1- शोक व क्रोध से ग्रसित मन से रावण-वध जैसा दुष्कर कार्य सम्भव न हो सकेगा। 2- यदि क्रोध करके मात्र व्यक्तिगत द्वेष के कारण रावण-वध किया गया तो इससे मैं हत्या के पाप का भागी बनूँगा। क्योंकि यह संलिप्त भाव होगा और 'मैं द्वारा किया गया कर्म होगा। इस प्रकार शोक क्रोध राग-द्वेष से किया गया कर्म, अर्थात इन तत्वों से लिप्त होकर अर्थात विग्रहपूर्ण मन से किया गया रावण-वध, संलिप्त होकर किये गये कर्म के कारण मुझे पाप का प्रतिभागी बना देगा। जबकि यदि यही कार्य निष्काम भाव से अर्थात बिना किसी राग-द्वेष

के निर्लिप्त होकर किया जाये तो स्थिति यह होगी कि जैसे कमल जल में रहकर भी, जल से लिप्त नहीं रहता है अर्थात जल, कमल के पत्तों को भिगो नहीं पता है। वैसे ही ये शोक, रावण के प्रति यह क्रोध, द्वेष तथा सीता के प्रति राग, मन को भिगोये नहीं और इसप्रकार मन विग्रह से ग्रसित हुए बिना, इस भावना से कार्य करेगा कि रावण अपने अहंकार व दुराचार के कारण संसार में बुराई का सिरमौर बना बैठा है तथा वास्तव में सभी सज्जन व्यक्ति इस रावण कारण अत्यन्त दुखी हैं और लोक-हित में, सज्जनों को आताताई के जुल्मो-सितम से बचाने के लिए, रावण-वध अनिवार्य है। यह कार्य वास्तव में धर्म का कार्य है, ईश्वरीय कार्य है और मैं नहीं, मैं तो निमित्त मात्र हूँ, ईश्वर ही यह कार्य सम्पन्न कर रहा है। यह सोचकर, इसी धारणा से मन को राग-द्वेष से रहित कर धर्म का कार्य समझकर उत्साही मन से भगवान राम ने रावण-वध किया और इस प्रकार अन्याय के विरूदध न्याय की विजय हुई।

यह भी तथ्य देने योग्य है कि भगवान राम का ह्रदय इस प्रकार राग-द्वेष से दूर था कि रावण में जो अच्छाई अर्थात विद्वता थी उसको भगवान राम ने माना तथा अपने अनुज लक्ष्मण को रावण से ज्ञान सीखने भेजा। ज्ञान सीखने हेतु लक्ष्मण विजेता होने का दर्प लिये जब रावण के सिरहाने खड़े हुए तो रावण ने दर्प से बाले गये लक्ष्मण के प्रश्नों का कोई उत्तर नहीं दिया। पुन: स्थिति समझकर भगवान राम ने विद्वता का समादर करते हुए लक्ष्मण को रावन के पैर की तरफ खड़े होकर विनम्रता से ज्ञान लेने के लिए भेजा। इस प्रकार भगवान राम का मन विग्रह से कितना रहित था इसका अन्दाजा इस तथ्य से भी हो सकता है कि यदि कोई दूसरा होता हो तो ऐसे शत्रु के वध के पश्चात शत्रु के शरीर के टुकड़-टुकड़े कर डालता। किन्तु राम ने जमीन पर पड़े रावण के शव को ससम्मान ले जाने के लिए शत्रु पक्ष को अनुमति दी। विग्रह-रहित मन इसीप्रकार महान कार्य सम्पन्न करते हैं या इस प्रकार कहें कि विग्रह-रहित मन से ही महान कार्य सम्पन्न होते हैं तथा मनुष्य को दोष नहीं लगता। गीता में भी भगवान ने कहा है कि हे अर्जुन तू जो कुछ भी कर वह मुझको अर्पित करता चल, ऐसा करने से तुझे कोई पाप नहीं लगेगा। अर्थात यह सोचकर मत कर कि मैं कर रहा हूँ। मैं करेगा तो मैं भुगतेगा। 'मै का भाव त्याग दे, तो जो कुछ करेंगे वह भगवान करेंगे। ऐसी सोच बना लेने से मन विग्रह से ग्रसित होने से बच जाता है। कहा भी गया है- आप जैसा सोचेंगे, उसी के अनुसार विचार बनेंगे, उन्हीं विचारों के अनुरूप आप कर्म करेंगे और यही कर्म आगे चल कर कर्मफल अर्थात भाग्य में बदल जायेगा।

चिन्ता, भय, निराशा, घृणा, क्रोध, आवेश, उद्विग्नता, ये सभी तनाव के कारण हैं। ये सभी मन में ही रहने के लिए स्थान बनाने का प्रयास करते हैं। ये मन को ढक लेते हैं। मन को इनसे बचाकर रखिये, इनसे दूर रखिये, लेकिन कैसे? कुछ वर्णन उपर कर चुका हूँ कुछ और बताता हूँ। खेल के मैदान में खचाखच दर्शकों से भरें स्टेडियम में आपने हाकी-फुटबाल या क्रिकेट का मैच अवश्य देखा होगा। स्टेडियम से लोग तरह-तरह के फिकरे कसते हैं,

यहाँ तक कि सड़े अण्डे और टमाटर खिलाड़ियों पर फेकते है, गालियाँ भी बकते हैं। लेकिन अच्छे खिलाड़ियों का ध्यान सदैव अपने लक्ष्य की तरफ केन्द्रित रहता है। वे दर्शकों द्वारा की जा रही बकवासों पर ध्यान नहीं देते। हाथी अपनी चाल चलता है, कुत्ते भौकते ही रहते हैं, उनका काम ही है भौकना। यदि खिलाड़ियों का मन दर्शकों की बकवासों पर चला गया तो उनके खेल पर इसका प्रभाव पड़ेगा, हो सकता है कि खेल रूक जाये। ऐसे ही जिन्दगी का खेल है। यदि आपने दुनियावालों की बकवासों पर ध्यान दिया तो उनकी ईष्या-द्वेष या क्रोधवश कही बातों से आपका मन आच्छादित हो जायेगा। तब इस आच्छादित अर्थात विग्रह से ग्रसित मन से आप कैसे अपने कर्मो को ठीक ढंग से आगे बढ़ा सकेंगे? इसलिये आप बकवास की बातों में सम्मिलित या संलिप्त (Involve) होने से अपने मन को बचाइये, दूर रखिये। कहा भी गया है- क्रूर से दूर सदा रहिये, चित्त भंग न होय, बचे रहिये।

देखिये अगर कहीं झगड़ा हो रहा होता है और आप दूर खड़े झगड़ा करा रहे होते हैं या दूर खड़े इसे देख रहे होते हैं तो इसका अर्थ है- आप उसमें संलिप्त या सम्मिलित नहीं हैं। उसे देखकर आप सही प्रकार से यह निर्णय कर सकते हैं कि कहाँ क्या सही या गलत है, लेकिन यदि आाप उस झगड़े या मारपीट में किसी रूप में सम्मिलित (involve) हो जाते हैं तो आपका मन क्रोध आदि से आच्छादित हो जायेगा, तब आपका अगला कदम गलत हो सकता है। इसलिये जीवन में जो भी करना है उसे कुछ यूँ समझकर करिये कि यह कार्य आपको ईश्वर ने सौंपा है और इसे आपको उनके लिये ही इस शरीर या दिमाग से करना है। इस प्रकार के मन से किये गये कार्यों से आपका मन काफी कुछ राग-द्वेष, क्रोध व घृणा से बचा रहेगा और आपका कार्य भलीप्रकार हो सकेगा जिससे आपको संतुष्टि भी मिलेगी। लेकिन यह सब होगा धीरे-धीरे निरन्तर अभ्यास से और तब आपके ज्ञान-चक्षु पूरी तरह खुल जायेगे। फिर देखियेगा कि जिन्दगी तमाम परेशानियों के बावजूद कितनी मजे में गुजरेगी। 'करत-करत अभ्यास से जड़मति होत सुजान।

जूडो का एक खेल होता है जिसमें यह सिखाया जाता है कि विपक्षी को गालियाँ इत्यादि देकर इतना क्रोधित कर दो कि वह आप पर अत्यन्त क्रोध के आवेश में वार करे। इस प्रकार क्रोध के आवेश में किया गया वार ठीक नहीं होता है तथा प्रतिपक्षी जो आवेश में नहीं है, स्वस्थ मस्तिष्क व विग्रह रहित मन से काम लेते हुए विपक्षी को धूल चटा देता है। इसलिये जीवन-संर्घष में यदि विजय प्राप्त करनी है तो अपने मन को क्रोध, घृणा, आवेश, उद्विग्नता, चिन्ता व भय से आच्छादित होने से बचाईये।

आप जानते हैं, हत्या आदि किसी मामले में जब मुजरिम को जज के फैसले पर फाँसी दे दी जाती है तो एक और हत्या हो जाती है। लेकिन जज को इस हत्या का कोई पाप नहीं लगता है, क्यों? क्योंकि जज ने जो फैसला किया वह, राग-द्वेष, क्रोध, घृणा, भय, लालच, स्वार्थ अथवा पक्षपात इत्यादि रहित मन से अपना कर्तव्य समझकर किया।

इसप्रकार से अर्थात निष्काम भावना से किये गये कार्यों से मनुष्य को कोई पाप नहीं लगता है। गीता में भी कहा गया है-

ब्रह्माण्याधाय कर्मकणि संग त्यक्तवा करोति य:।
लिप्यते न स पापेन पद्यपत्रमिवाम्भसा॥

प्रयास करो, अभ्यास करो कि जीवन का प्रत्येक कार्य निष्काम कर्म समझकर निष्काम भावना से किया जाये, ताकि जीवन पूर्णत: तनाव-रहित एवं संतोषप्रद हो।

मुझे एक दृष्टान्त याद आया। मुसलमानों के एक खलीफा हुए हैं- हजरत अली। उन्होंने अपने एक भयंकर शत्रु को एक अवसर पर परास्त कर जमीन पर गिरा दिया तथा तत्काल तलवार उसकी गर्दन पर रख दी। लेकिन यह देखकर लोगों के आश्चर्य की सीमा न रही कि उन्होंने उसे छोड़ दिया। उनके अनुयायियों ने उनसे कहा कि बड़ी मुश्किल से इतना खतरनाक शत्रु आपके कब्जे में आया, फिर आपने उसे छोड़ क्यों दिया? खलीफा ने जवाब दिया कि दोनों बार जब मैंने उसकी गर्दन पर तलवार की नोंक रखी तो उसने मुझ पर थूक दिया था जिससे मुझे क्रोध आ गया था। इस व्यक्तिगत क्रोध के कारण यदि मैं उसका वध करता तो संसार यही कहता कि अपनी व्यक्तिगत दुश्मनी के कारण उसका वध किया जिसका पाप व्यक्तिगत-विग्रह होने के कारण मुझ पर पड़ता। तीसरी बार उन्होंने विग्रह-रहित होकर उसे परास्त किया और उसकी इहलीला समाप्त कर दी। देखिये, महान व्यक्ति ऐसे ही होते हैं जो विग्रह से ग्रसित मन से कोई कार्य नहीं करते इसलिये बड़े योद्धा होते हुए भी वे तनाव-रहित होते हैं। ऐसे महान लोग हमारे-आपके बीच में भी होते है जो महान होते हुए भी साधारण बनकर रहते हैं।

जुआड़ी जुयें में involve हो जाता है। जितना हारता जाता है उतना ही दाँव लगाता जाता है, यहाँ तक कि अपनी बीबी को भी दाँव पर लगा देता है। पूरी तरह involve होने के कारण पूरी तरह विग्रह से ग्रसित हो जाता है। विग्रह से ग्रसित मन विवेक-शून्य होता है। इसके विपरीत इस जुयें को देखने वाला जो कि involve नहीं है, विवेकशील रहता है। क्या सही है, क्या गलत है अर्थात उचित-अनुचित का भेद उसके ध्यान में रहता है। कहने का अर्थ है कि यदि विग्रह से बचना है तो involve न हों, संलिप्त न हों। अन्यथा भयंकर सुख-दु:ख उपजता रहेगा जो आपको आगे के कार्य भी चैन से न करने देगा। निर्लिप्त भाव से कार्य करने पर आप कार्य तो करेंगे किन्तु आपका मन राग-द्वेष से आच्छादित न होगा क्योंकि आप यह समझेंगे कि आपकी या किसी की कोई हस्ती नहीं है वरन प्रभु ही सब करता-कराता है और सबकुछ प्रभु का ही है। मैं कुछ भी नहीं हूँ, न ही मेरा कुछ है, जो कुछ है सब प्रभु का है और प्रभु की मर्जी से है।

विग्रह से बचकर निग्रह से काम करने का एक उदाहरण मुझे एक प्रदर्शनी में साड़ी के एक स्टाल पर देखने को मिला। जहाँ सेल्समैन से कहा गया कि उसे साड़ी बेंचने पर अर्थात बिक्री पर ध्यान केन्द्रित नहीं करना है, उसे मात्र कस्टमर को संतुष्ट करना है, जो भी

उसकी दूकान पर आये उसे समुचित रूप से साड़ी दिखाने आदि की मेहनत करना है। वे लें या न लें, उसे यह नहीं देखना है। सेल्समैन ने ऐसा ही किया, परिणाम यह हुआ कि अप्रत्यक्ष रूप से बिक्री बढ़ जाने के कारण दो और सेल्समैन उस स्टाल पर लगाने पड़े। जीवन में भी इसी प्रकार सारा ध्यान मात्र कर्म पर ही रहे। मन कर्म में ही रहे, परिणाम में नहीं, यही निग्रह है। काम करने में सदैव सावधान रहें और परिणाम में संतुष्ट। इस सूत्र-वाक्य को धारण कर लें।

मन जड़ अर्थात मूल है और शरीर उसका कलेवर, अच्छादन। मन से ही सब होता है। मन प्रफुल्लित है तो थके-हारे होने पर भी मनुष्य काम के लिए खुशी-खुशी आगे बढ़ता है। ये शरीर, मन-मस्तिष्क का आज्ञाकारी सेवक है। इसलिये मन को विग्रह से बचाकर रखिये, निग्रह से कर्म करिये और तनाव-मुक्त जीवन जियें।

4. त्याग-तपस्या की संस्कृति अपनाकर आत्म-बल बढ़ायें

एक कक्षा में अध्यापक ने अपने विद्यार्थियों से प्रश्न किया कि भगवान राम को अपने वनवास में सुख मिला अथवा दु:ख? सभी विद्यार्थियों का उत्तर था कि भगवान राम ने अपने वनवास-काल में दु:ख ही दु:ख उठाये हैं, उन्हें सुख लेशमात्र का न था। हममें से अधिकांश अथवा लगभग सभी इसी विचार के हैं। किन्तु यदि कहा जाये कि नहीं भगवान राम को वनवास जाने और वनवास व्यतीत करने में अपार सुख का अनुभव हुआ और उन्हें दु:ख लेशमात्र भी न था तो इस कथन से कतिपय व्यक्ति ही शायद सहमत हों। अग्रिम पंक्तियाँ इसी सत्य को उजागर करेंगी कि भगवान राम को अपने वनवास में कैसे अपार सुख का, असीम शान्ति का अनुभव हुआ। आपने अवश्य ही पढ़ा-सुना होगा कि कैसे भारत के सपूतों ने हँसते-हँसते फाँसी के फन्दे को चूमकर अपने प्राण न्योछावर कर दिये। क्या उनकी हँसी दिखावटी थी? क्या कोई फाँसी के फन्दे में पहुँचकर भी वास्तविक हँसी हँस सकता है? लेकिन यह अटल सत्य है। अमर-शहीद खुदीराम बोस को फाँसी की सजा सुनाई जा चुकी थी और फाँसी का दिन तय जो चुका था। जेलर बहुत उदास था। उसने खुदीराम बोस से कहा कि कोई अन्तिम इच्छा हो तो बता दो, पूरी करने का प्रयास करूंगा। खुदीराम बोस ने कहा कि वह जी भरकर आम खाना चाहता है। बोस की यह बात सुनकर जेलर को अत्यन्त आश्चर्य हुआ। जिस व्यक्ति को फाँसी होने वाली है। वह आम खाने को कह रहा है। बहरहाल उसने एक डलिया आम लाकर स्वयं रख दिये। कुछ देर के बाद जेलर देखने आया। उसने देखा कि सारे आम डलिया में ज्यों के त्यों रखे हैं और खुदीराम बोस उदास बैठे हुए हैं। जेलर ने एक हँसी का ठहाका लगाया और कहा-बच्चा आम खाओगे। बेटा, बड़े-बड़ों को देखा है। फाँसी की सजा पर रोते ही देखा है, हँसते नहीं। ऐसा कहते हुए जेलर

ने पुन: कहा कि चल तू नहीं खाता तो मैं ही खा लूँ ओर उसने डलिया से एक आम उठाया, देखा कि आम चूस कर उसकी गुठली उसी में रखकर इसतरह रखा हुआ था कि जैसे छुआ ही न गया हो। इसी तरह एक-एक करके जेलर ने डलिया के लगभग सभी आम देखे। उसे यह देखकर अत्यन्त आश्चर्य हुआ कि डलिया के सभी आम चूसे जा चुके थे। उधर जेलर को ऐसा करते देख खुदीराम बोस की हँसी का फौव्वारा छूट पड़ा। जेलर का मुँह अवाक और खुला का खुला रह गया।

इस प्रकार हजारों सच्चे किस्से हैं। कैसे रानी पद्मावती और किले की हजारों स्त्रियों ने अपने सतीत्व को बचाने केलिए स्वयं अग्नि को अंगीकार किया जो "जौहर" के नाम से इतिहास-प्रसिद्ध है।

कैसे एक सैनिक हँसते-हँसते सीमा पर प्राण न्योछावर कर देता है और कैसे कोई व्यक्ति भूखा रहकर मर जाना पसन्द करता है लेकिन भीख के लिए हाथ नहीं पसारता?

यह भी देखिये कि कैसे चाणक्य ने पास में कुछ भी न होते हुए 'नन्द' को राजगद्दी से उतरवाकर "चन्द्रगुप्त" को सम्राट बनाया और कैसे राजा "द्रुपद" से अपमानित होकर गुरू द्रोणाचार्य ने अर्जुन के हाथों द्रुपद को परास्त करवाकर अपने समक्ष बन्दी के रूप में प्रस्तुत कराया, जबकि यह तथ्य ध्यान देने योग्य है कि जब चाणक्य और द्रोणाचार्य के साथ अपमानजनक घटना हुई तो उस समय वे नितान्त धन, बलरहित थे। द्रोणाचार्य की स्थिति तो यह थी कि जब उनकी स्त्री ने अपने बच्चे 'अश्वत्थामा' को दूध के अभाव में आटा घोलकर पिलाया और यह कहकर फुसला दिया कि यह दूध है तो इस दृश्य को देखकर और स्त्री का यह ताना सुनकर कि कहते हो कि राजा द्रुपद आपके सहपाठी रह चुके हैं तो क्यों नहीं उनसे कुछ ले आते हो। द्रोणाचार्य द्रुपद के पास गये तो द्रुपद ने कहा कि तुम भिखमंगे के भिखमंगे ही रहोगे। द्रोणाचार्य द्वारा मित्रता का उल्लेख करने पर द्रुपद ने उन्हे शिक्षा दी कि मित्रता बराबर में होती है, भिखमंगों के साथ नहीं। इसप्रकार अपमान की चोट ह्रदय पर खाकर जब द्रोणाचार्य लौटे थे तो उस समय वे खाली ही थे। इसी प्रकार का एक और दृष्टान्त देखिये कि कैसे पास में टका न होने पर भी पं. मदन मोहन मालवीय ने इतनी विशाल एवं उच्चकोटि की यूनिवर्सिटी खड़ी कर दी।

यह सब कैसे सम्भव हो पता है? इसके पीछे कौन सा बल है जो मनुष्य को निरीह स्थिति से निकाल कर इतनी ऊँचाइयों पर पहुँचा देता है। इसका उत्तर है कि इस सब के पीछे मात्र एक बल कार्य करता है- वह है "आत्म-बल"। क्या है यह "आत्म-बल" और यह कैसे प्राप्त होता है?

"आत्म-बल" वह बल है जो मनुष्य की आत्मा में रहता है और जब मनुष्य अपने शरीर, मन व मस्तिष्क से ऊपर उठकर अपनी आत्मा में पहुँच जाता है तो वह आत्मा सक्रिय हो जाती है और अपने बल से शरीर, मन तथा मस्तिष्क से अभीष्ट कार्य कराने

लगती है। ऐसा करने से मनुष्य की आत्मा को तृप्ति मिलती है, उसके चेहरे पर तेज आता है और वह तनाव-रहित व सन्तुष्ट दिखलायी पड़ता है।

देखिये-दिसम्बर-जनवरी की कड़ाके की ठण्ड़ और वह भी रात्रि में, ऊनी शाल ओढ़े दो अलग-अलग व्यक्ति अतिशय जाड़े के कारण सुनसान हुए रास्ते पर चले जा रहे हैं। सड़क के किनारे, पेड़ के नीचे बैठा एक अत्यन्त बूढ़ा व्यक्ति ठण्ड के मारे कपकपा रहा है और उसके दाँतों के आपस में टकराने की आवाज भी कटकटाहट के रूप में स्पष्ट सुनाई दे रही है। एक व्यक्ति उसके पास से गुजरता है और इस स्थिति को देखकर भी अनदेखा कर आगे बढ़ता चला जाता है। सोचता है कि दुनिया में तो ऐसे तमामों मरा करते हैं। इनके लिए स्वयं क्यो कष्ट उठाया जाये। पीछे से आ रहा दूसरा व्यक्ति भी उस बूढ़े तक पहुँचता है और उसकी स्थिति देखकर विचार करता है कि वास्तव में बूढ़ा बिल्कुल असहाय और निरीह है। यह दूसरा व्यक्ति अपने तन, मन व मस्तिष्क से होता हुआ अपनी आत्मा में पहुचता है। इसका आत्म-बल सक्रिय हो जाता है। तब यह व्यक्ति अपनी ऊनी शाल उतारकर उस बूढ़े के चारों तरफ लपेट देता है। बूढ़े को तुरन्त ही कुछ गरमाहट सी महसूस होती है, वह उस व्यक्ति पर आशीर्वाद की झड़ी लगा देता है। वह व्यक्ति आगे बढ़ जाता है। पहले वाले व्यक्ति ने, जो कुछ ही कदम आगे गया था, ने भी यह दृश्य देखा और अपने मन में सोचा कि मूर्ख है किन्तु यह समझ का फेर है, कयोंकि कहा भी गया है:

राम-नाम के कारना, सब धन डारा खोय।
मूरख जानिस गिर पड़ा कि दिन-दिन दूना होय॥

अब दूसरा व्यक्ति बिना शाल के आगे बढ़ा जा रहा है। लेकिन यह क्या? अत्यन्त ठण्ड़ होते हुए भी और कीमती ऊनी शाल वृद्ध व्यक्ति के हवाले कर देने के बावजूद इस व्यक्ति को ठण्डक से परेशानी महसूस नहीं हो रही है, बल्कि वह तो अत्यधिक सन्तुष्ट होकर आगे बढ़ा जा रहा है। आखिर इसे क्या मिल गया जो इसके चेहरे पर सन्तोष का भाव आ गया है। इसका तो कीमती शाल, कम्बल भी चला गया, जबकि यह कोई अमीर व्यक्ति भी नहीं है। वह व्यक्ति जो पहले आगे बढ़ गया था उसके चेहरे पर तो सन्तोष का कोई भाव नहीं है

गोधन, गजधन, बाजधन और रतनधन खान।
जब आवै सन्तोष धन, सब धन धूरि समान॥

यह सन्तोष, आत्म-सन्तुष्टि से ही मिलता है और आत्म-सन्तुष्टि कैसे मिलती है, आपने देखा। ऐसा सन्तोष पाने पर मनुष्य तनाव-रहित हो जाता है और उसके चेहरे पर आत्म-बल का तेज स्पष्ट झलकने लगता है। क्यों? क्योंकि ऐसा सन्तोष आत्मा की खुराक है, आत्मा का आहार है। ध्यान रहें आत्मा यदि भूखी रहे तो तन-मन को कितना भी सजा लो, कितना भी स्वादिष्ट भोजन और बढ़िया वस्त्र इस तन पर धारण कर लो, अच्छे से अच्छे

भवन में रह लो, तनाव-मुक्त नहीं हो पाओगे। क्यो? क्योंकि सन्तोष का भवन तो खाली पड़ा है, आत्मा तो भूखी है।

आत्मा को पोषण देने वाला व्यक्ति खुशी-खुशी ऐसे कार्य कर सकता है जो दूसरों के लिए सम्भव नहीं है। ऐसे व्यक्ति ही जीवन में सन्तुष्ट, तनाव-रहित और वास्तविक अर्थों में सुखी-जीवन का आनन्द उठा पाते हैं। वास्तव में अगर कुछ पाने की इच्छा रखते हो तो देना सीखो। जब तक दूसरों से पाने की इच्छा रखोगे तब तक जिन्दगी सही अर्थों में नहीं जी सकोगे। दूसरों की मदद करने के बाद जो खुशी मिलती है उसे महसूस करो और तब देखोगे कि जीवन वही है जो दूसरों के लिए जिया जाये।

अपनी जीविका से सम्बन्धित कार्यों को करते हुए भी उनके साथ मनुष्य आत्म-तुष्टि हासिल करते हुए तनाव-रहित जीवन-यापन कर सकता है।

एक प्रसिद्ध साहित्यिक पत्रिका के सम्पादक किसी कार्य से बंगलौर पहुँचे और वहाँ एक होटल में ठहरे। नाश्ते और खाने के समय होटल के रूटीन के अनुसार उनके कमरे में नाश्ता व खाना लाया गया किन्तु उन्होने हर बार यह कहकर मना कर दिया कि वह बाहर से खाकर आ गये हैं अथवा उनका आज बाहर लन्च है। होटल का मैनेजर जो अपने होटल के प्रत्येक अतिथि के बारे में जानकारी करता था कि उसके किस अतिथि ने खाना खाया, किसने नहीं खाया अथवा उसके होटल के कारण किसी को कोई तकलीफ तो नहीं हुई है, को यह बात मालूम हुई कि अमुक महाशय ने उसके होटल का भेजा हुआ नाश्ता अथवा खाना ग्रहण नहीं किया है। कुछ समय पश्चात सम्पादक महोदय यह देखते हैं कि उनके लिये कुछ फलाहार और व्रत में खाने योग्य सामग्री चली आ रही है। उन्हें यह देखकर अत्यन्त आश्चर्य हुआ कि होटल के मैनेजर को यह कैसे मालूम हुआ कि वह नवरात्रि-व्रत हैं और फिर होटलों में तो ऐसी व्यवस्था होती नहीं है। वह तीन-चार जितने दिन उस होटल में ठहरे उनके नाश्ते व भोजन की यही व्यवस्था रही। होटल छोड़ते समय उनके सामने पेमेण्ट के लिये जो बिल आया उसमें इस फलाहार का चार्ज जोड़ा नहीं गया था। इस बाबत सम्पादक महोदय द्वारा ध्यान आकृष्ट करने पर होटल के मैनेजर ने उत्तर दिया कि जनाब, यह तो उसका फर्ज बनता है कि वह अपने होटल में पधारे हर सज्जन का ध्यान रखे और फिर यह उसका नैतिक धर्म था, जिसका भला कोई मूल्य लेता है। मैनेजर की इन बातों से सम्पादक महोदय काफी प्रभावित हुए। वे लिखते हैं कि अब जब भी उनका बंगलौर जाना होता है, वे उसी होटल में ठहरते हैं।

एक और अनुभव मेरी आँखों के सामने है। उत्तर प्रदेश राज्य सड़क परिवहन निगम की रात्रिकालीन सेवा की एक बस अर्धरात्रि में आगरा से होते हुए मध्य प्रदेश जा रही थी। बस का कण्डक्टर बस-स्टापेज पर बस रोककर, चिल्लाकर उस स्टापेज पर उतरने वाले यात्रियों को उतरने के लिये आवाज देता था। सम्बन्धित यात्री उतरते थे और बस आगे बढ़ जाती थी। अचानक एक स्टापेज पर जब बस रूकी और कण्डक्टर ने उस स्थान की

आवाज दी तो, एक महाश्य ने कण्डक्टर से कहा कि उनकी अटैची गायब हो गयी है, उस अटैची में कीमती सामान व काफी नगदी थी जो वे अपनी पुत्री के विवाह हेतु लिये जा रहे थे। कण्डक्टर को ध्यान आया कि जब यात्री बस में चढ़ा था तो उसके हाथ में एक विशेष अटैची थी जिसे एक दूसरा यात्री सात किलोमीटर पहले रास्ते में ही बिना स्टापेज के बस रूकवाकर अटैची लेकर उतर गया था। कण्टक्टर इस रास्ते से वाकिफ था और जानता था कि जहाँ वह यात्री उतरा था वहाँ से इस स्टापेज तक इस सड़क के अतिरिक्त कोई और रास्ता न था और वह यात्री अभी रास्ते में ही होगा क्योंकि कोई और बस भी अभी न तो आने वाली दिशा के लिए और न ही जाने वाली दिशा के लिए गुजरी है। कण्डक्टर और ड्राइवर ने आपस में तय करके बस के आगे स्थान के नामों की लगी प्लेटों को बदल दिया और बस लगभग सात किलोमीटर वापस लौटायी। रास्ते में अटैची हाथ में लिये एक व्यक्ति ने हाथ देकर बस रूकवायी। वास्तव में यह वही व्यक्ति था जो अटैची चुराकर उतर गया था। और इस भ्रम में बस पर चढ़ गया कि यह वापस आगरा की तरफ जाने वाली बस है। किन्तु बस पर चढ़कर कण्डक्टर को पहचानते ही वह उतरकर भागने को हुआ लेकिन पकड़ा गया। कण्डक्टर-ड्राइवर की सहायता से उन महाश्य की अटैची उन्हें वापस मिल गयी थी। अब आप ही बतायें कि ऐसा करके उन कण्डक्टर-ड्राइवर को कष्ट हुआ अथवा आत्म-सुख की अनुभूति हुई? सच ही कहा गया है कि-

लोगों ने जीते है देश, तो क्या?
हमने तो दिलों को जीता है।

लोगों के हृदयों को जीतने वाले ऐसे व्यक्ति लोगों के दिलों पर राज्य करते हैं और जो जितने हृदयों को जीतता है वह उतना ही शक्तिशाली होता है, उसका राज्य उतना ही विस्तृत होता है। इसी कारण ऐसे व्यक्तियों का आत्म बल भी बढ़ा-चढ़ा होता है और आत्म-बल के समक्ष सारे बल, सारी शक्तियाँ क्षीण हो जाती हैं। ऐसे महापुरूषों के आगे तलवारें भी नत-मस्तक हो जाया करती हैं।

खूँखार डाकू अँगूलीमाल 999 व्यक्तियों की हत्या कर उनकी अँगुली अपनी माला में पिरो चुका था। उसका प्रण पूरा होने में मात्र एक अँगुली की कसर थी। ऐसी ही समय भगवान बुदध लोगों के लाख मना करने के बावजूद उस क्षेत्र में प्रविष्ट हुए जहाँ अँगुलीमाल रहता था। उस समय के बड़े-बड़े राजा भी अँगुलीमाल से आतंकित थे, वह पूरी तरह हृदयहीन व निर्दयी था। बुदध आगे बढ़े जा रहे थे। आगे जाने पर अँगुलीमाल को एक व्यक्ति अपनी ओर आता दिखलायी पड़ा। अँगुलीमाल प्रसन्न हुआ कि चलो आज उसका प्रण पूरा हो जायेगा। अँगुलमाल भी तेजी से आगे बढ़ा। लेकिन वह तो ठिठक कर कुछ रूक सा गया, जब उसने देखा कि उसका शिकार उसे आगे बढ़ते देखकर भी भागने के बजाय स्वयं उसकी ओर बिल्कुल निडर होकर बढ़ता चला आ रहा था। ऐसा तो पहले कभी नहीं हुआ। अरे! अब तो उन दोनों के बीच मात्र बीस फुट का ही फासला रह गया। यह क्या ! उल्टा

अँगुलीमाल ही चिल्लाने लगा? तुझे मौत से डर नहीं लगता जो बढ़ा चला आ रहा है। वह चिल्लाकर बोला मैं अँगुलीमाल हूँ। मात्र दस फुट की दूरी रह गयी। गजब हो गया ! अँगुलीमाल की आवाज में कँपकपाहट आ गयी, जबान लड़खड़ाने लगी। मैं कहता हूँ वही रूक जाओं। आगे मत बढ़ो, मैं छोडँगा नहीं। गौतम बुदध हैं कि एक हाथ क्षमा-आशीर्वाद की मुद्रा में उठाये हुए उसी की ओर उसकी आँख में आँख डाले हुए, बढ़े चले आ रहे हैं। अब भगवान बुदध अँगुलीमाल के ठीक सामने थे, उनके चेहरे का तेज उससे बर्दाश्त न हो सका। वह थर-थर काँपने लगा। हाथ की तलवार छूट गयी। वह स्वयं भी खड़ा न रह सका। भगवान बुद्ध के पैरों पर गिर पड़ा। फफक-फफक कर रोने लगा। अपने कुरुर अपराधों की क्षमा माँगने लगा। भगवान-बुदध ने उसे उठाया। गले से लगाया। यह आत्म-बल था, जिसके आगे कूररतम तलवार की शक्ति नत-मस्तक थी। जिसे ह्रदयहीन कहा जाता था उसमें ह्रदय आ गया था, जिस पर भगवान बुदध काबिज थे। ऐसा ह्रदय जीतने पर भगवान-बुद्ध का आत्म-बल और भी अधिक शक्तिशाली हो गया था। आत्म-विश्वास अपनी ईश्वरीय शक्ति में समाहित हो गया। ऐसे व्यक्ति को भला कौन परास्त कर सकता है।

आत्म-बल नि:स्वार्थ भाव से परोपकारी कार्य करने से उत्पन्न होता है, बढ़ता है। नि:स्वार्थ भाव से कार्य तभी होता है जब मनुष्य तन, मन-मस्तिष्क से होता हुआ आत्मा में पहुंचकर आत्म-शक्ति आर्थात आत्मा की शक्ति पर अवलम्बित होकर अपने तन, मन व मस्तिष्क से कार्य करना प्रारम्भ करता है। इस अवस्था में मनुष्य राग-द्वेष से रहित होकर सुख के लालच और दु:ख के कष्ट से परे होकर कार्य करने लगता है। एक कलाकार एक सुन्दर नग्न स्त्री को सामने बिठाकर उसका चित्र बना रहा है, उसका सम्पूर्ण ध्यान कला पर है। वह इस समय आत्मा में बसा है। अच्छा सा चित्र बन रहा है। इस समय अपनी आत्मा में बसा कलाकार नि:स्वार्थ है, उसका आत्म-बल सक्रिय होकर अच्छे से अच्छा कार्य अंजाम दे रहा है। किन्तु जिस क्षण वह आत्मा से उतर कर मस्तिष्क में आ जायेगा, उसका तन व मन आत्मा से संचालित न होकर मन-मस्तिष्क से संचालित होने लगेगा और फिर तूलिका छूट जायेगी। वह तुलिका छोड़कर उस स्त्री के पास पहुंच जायेगा। वह नि:स्वार्थ भाव से कार्य न कर सकेगा। वासना में डूब जायेगा तथा उसका कार्य आधा-अधूरा सा रह जायेगा और उसका आत्म-तेज, जिसके बल पर वह अत्यन्त सुन्दर ढंग से कार्य पूर्ण कर रहा था, जाता रहेगा।

आत्म-बल से किये गये कार्यों से मनुष्य अनेकानेक ह्रदयों पर राज्य करने लगता है और उन ह्रदयों से निकले आशीर्वाद उसके आत्म-बल से मिलकर उसे दृढ़ता प्रदान करते हैं जो परम-संतुष्टिकारक होता है।

इसी आत्म-बल के बूते पर भारत के सपूत आजादी की जंग में हँसते-हँसते शहीद हो गये। सैनिक सीमा पर प्राण न्योछावर कर देते हैं। मनुष्य भूखा मर जाता है लेकिन भीख के लिए हाथ नही पसारता। इसी आत्म-शक्ति के बल पर पंडित मदन मोहन मालवीय ने

बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी खड़ी कर दी और इस हेतु उनके द्वारा दान में प्राप्त किये गये धन को भिक्षा नहीं कहा गया वरन उस दान को देकर लोगों ने अपने को गौरवान्वित महसूस किया। नेता जी सुभाषचन्द्र बोस ने इसी आत्म-बल पर विदेशों में अप्रवासी भारतीयों की सहायता से "आजाद-हिन्द फौज" खड़ी कर दी और जब परेड के वख्त एक नवयुवक ने उनसे प्रश्न किया कि वह क्यों भारत की आजादी के लिए लड़े-मरे? उसने न तो भारत में जन्म लिया और न ही उसने कभी भारत देखा है। नेताजी को ज्ञात था कि वह नवयुवक अपनी माँ, जो उसे जन्म देते ही मर गयी थी, की फोटो सदा अपने साथ रखता था। उन्होंने उसी नवयुवक की जेब से वह फोटो निकाली और वह फोटो दिखाते हुए उससे पूछा कि यह तुम्हारी माँ की फोटो है। उसने "हाँ" कहा। तब उन्होंने प्रश्न किया कि इसे क्यों हर समय जेब में रखते हो? इसे तो तुमने देखा नहीं, जैसे तुमने भारत माँ को नही देखा। अपने सैनिकों को आत्म-विश्वास से भर देने वाले कमाण्डर इसी प्राकर आत्म-बल में बढ़े-चढ़े होते हैं। पग-पग पर आत्मा ही उन्हें रास्ता दिखाती रहती है, क्योंकि आत्मा में निहित होकर ही वे ऐसे महान कार्य सम्पन्न करते हैं।

एक उदाहरण देखिये। क्रान्तिकारियों के लिए राइफलों का स्टाक लेकर उन्हें एक स्थान पर पहुँचाने का दायित्व सरदार भगत सिंह को सौंपा गया। अंग्रेजों को इस बात की भनक लग गयी थी। उन्होंने चौकसी बढ़ा दी। अपने महान देश-धर्म के खातिर सरदार भगत सिंह ने अपनी दाढ़ी मुड़वा दी एवं लम्बे केश कटवा दिये। गोरे-चिट्टे तो थे ही, हैट पहनकर मिलटरी की वर्दी पहनी। अब वे बिल्कुल अंग्रेज मिलिटरी ऑफिसर थे। राइफालें का स्टाक लिये प्रथम-श्रेणी के डिब्बे से उतरकर राइफालों से भरा बाक्स उन्होंने कुलियों के सिर पर लदवाया। स्टेशन के प्लेटफार्म पर ही एक कुली को ठोकर लगी, बाक्स प्लेटफार्म पर गिर गया और उसमें से बिखर कर राइफलें बाहर आ गयीं। स्टेशन पर पहले से एलर्ट पुलिस एकदम उस स्थान पर दौड़कर आ गयी। कोई और होता तो उसके हाथ-पैर फूल जाते। किन्तु भगत सिंह बिलकुल भी नही घबड़ाये, अपितु उन्होंने कड़कर आवाज में उस कुली को डाँटते हुए दो ठोकर और लगायी, कहा- देखता नही है कि मिलिटरी की राइफले हैं, ठीक से नही चलता। पास आये सारे पुलिसवाले दूर हट गये। भगत सिंह अस्त्र-शस्त्रों के साथ सकुशल बाहर निकल गये। बाद में ज्ञात हुआ कि किस प्रकार अंग्रेजों की आँखों के सामने से एक बुद्धिमान एवं दिलेर भारतीय शस्त्र ले जाने में सफल रहा। यह धीरज और यह साहस "अमर-शहीद भगत सिंह" के आत्म-बल का ही एक हिस्सा था। आत्मा में प्रविष्ट होकर कार्य करने वालों को भला भय कैसा। वे जानते हैं कि आत्मा अजर-अमर है।

त्याग में दु:ख नहीं अपितु ऐसा सुख है जो हमारे जीवन को तनाव से मुक्ति दिलाता है। हमारी संस्कृति "त्याग और तपस्या की संस्कृति" है, जबकि विदेशों की "भोग और विलास की संस्कृति" अब हमारे देश में पल-बढ़ रही है। नतीजा क्या है- भौतिक सुख-सुविधा के लगभग सभी साधन हमारे पास मौजूद हैं। फ्रिज, टेलीविजन, वाशिंग-मशीन,

वीसीआर, मिक्सी आदि क्या कुछ नहीं है हमारे घरों में फिर भी जीवन तनावपूर्ण है। इसकी स्थिति वैसी ही है जैसे निष्प्राण सुन्दर शरीर। ह्रदय और आत्मा शरीर का प्राण है, जब तक इनका पोषण न होगा, जीवन तनाव-रहित न हो सकेगा। इनका पोषण "त्याग-तपस्या की संस्कृति" अपनाकर ही होगा। "भोग-विलास की संस्कृति" से नहीं और दोनों संस्कृतियों को आप एक-साथ नहीं रख सकते। एक को अपनाओगे तो दूसरी अवश्य छूट जायेगी। एक में मन-आत्मा की शाश्वत सुख-शान्ति है तो दूसरे में शरीर का क्षणिक सुख जो पल प्रतिपल नष्ट होता है और तृष्णा बढ़ती चली जाती है जिसका कोई अन्त नहीं, कोई सीमा नहीं।

'चींटी चावल लै चली, बीच में मिल गयी दाल।
कहे कबीर दोउ न मिले, एक जे दूजी डार॥

'त्याग-तपस्या' और 'भोग-विलास' की संस्कृति और उसके परिणामों में क्या अन्तर है। इस उदाहरण से हम आसानी से समझ सकेंगे। 'स्वर्ग' और 'नर्क' दोनों के फाटक अगल-बगल थे। उनके फाटक के सुराख से झाँकने पर व्यक्तियों ने पाया कि स्वर्ग में कुछ बच्चे पढ़ने में तल्लीन हैं, कुछ मनुष्य एक-दूसरे की सेवा कर रहे हैं, कोई ईश्वर की आराधना में निमग्न है, श्रम कर रहे हैं, फल आदि देशी भोजन कर रहे हैं, आदि आदि। 'नर्क' में लोग खूब नाच-गाने में मस्त हैं, स्त्री-पुरूष अय्याशी में डूबे हुए है, मदिरा पी रहे हैं, हँसी के ठहाके लग रहे हैं, भाँति-भाँति के व्यंजन परोसे जा रहे हैं। अपनी-अपनी बुदिध, समझ पसन्द के अनुसार कुछ लोग 'स्वर्ग के द्वार' में और कुछ 'नर्क के द्वार' में प्रवेश कर गये। काफी आगे जाकर एक स्थान ऐसा था जहाँ स्वर्ग व नर्क जाने वालों की मिला-भेंटी हुई। नर्क के लोगों ने देखा कि वृधावस्था होने पर भी स्वर्ग जाने वाले काफी हृष्ट-पुष्ट व प्रसन्नचित्त हैं और उनके परिवारीजन उनकी सेवा-सुश्रुषा कर रहे हैं, जबकि नर्क स्वीकार करने वाले कई व्यक्ति रास्ते में ही काल-कवलित हो गये और जो बचे हैं वे रूग्ण हैं। उनके बच्चे उनका ध्यान देने के बजाये इस प्रतीक्षा में हैं कि उन पर बोझ बने ये बूढ़े कब संसार से विदा लें और उनकी सम्पत्ति उन्हें हासिल हो जाये। आपस में मारकाट भी मची है। जी हाँ। इन दोनों संस्कृतियों का हश्र कुछ ऐसा ही है। बाहर देखने में कुछ, अन्दर से कुछ और।

आप जब थोड़ा सा त्याग करते हैं, सामने आये एक भूखे व्यक्ति को अपने टिफिन का लंच खिला देते हैं तो भूखे रहकर भी आपको एकप्रकार का सुख मिलता है, जो तब न मिलता जब आप स्वयं लंच खा जाते। थोड़े से त्याग में इतना सुख। भगवान राम ने तो असीम त्याग किया। निस्सन्देह, उन्हें इसमें आपार सुख हुआ और इसी सुख की प्राप्ति में उन्हें कष्टो का लेशमात्र भी अहसास नहीं हुआ। रावण के भय से डरी-सहमी न जाने कितनी निरीह जनता का उन्होंने उद्धार किया। इस कार्य में उन्हें सुख मिलता था। दुष्टों का दमन करके सज्जनों का उदधार करना- उनका क्षत्रिय धर्म था और आप यह बात मान लीजिये - संसार में ऐसे अनेकों लोग हुए हैं और हैं भी जिन्हें अपना धर्म पालन करने में ही सु:ख मिलता है, उन्हें कष्टों से परेशानी नहीं महसूस होती है, वरन कष्टों की चुनौती से वे

दुगने उत्साह से अपने धर्म पालन में जुट जाते हैं। भगवान राम को भी अपने क्षत्रिय धर्म का निर्वहन करने में अपार सुख हुआ और इसी सुख की प्राप्ति में उन्हें, वे कष्ट जिन्हें हम कष्ट कहते हैं, कष्ट नहीं मालूम पड़े। अपने धर्म का पालन करने के कारण उनका आत्म-बल इतना बढ़ा चढ़ा था कि भालू-वानर जिन्हें राक्षस अपना आहार समझते थे और कभी कल्पना में भी रावण की खिलाफत सोच नहीं सकते थे। प्राण जाने का भय त्याग कर रावण के विरूद्ध लड़ने को खड़े हो गये। गिलहरी को देखिये, बार-बार बालू में लोटती और समुद्र में डुबकी लगाकर समुद्र में बालू गिराती, ताकि समुद्र पट जाये और राम, रावण-बध के लिए उस पार पहुँच जायें। ऐसा था राम का आत्म-बल जो उनसे होता हुआ छोटे-छोटे जीव-जन्तुओं में पहुँच गया था, वह भी महाप्रतापी रावण के विरूद्ध। यदि राम चाहते तो अयोध्या से चतुरंगिणी-सेना बुलाकर रावण का वध करते। लेकिन उन्होंने ऐसी कोई सहायता लेने से मना कर दिया। क्योंकि 'एक तीर दो निशाने', उन्होंने एकतरफ दबी-कुचली डरी-सहमी जनता का आत्म-बल जाग्रत किया और दूसरी तरफ उसीसे रावण के साम्राज्य का पतन कराया जिससे रावण का अहंकार भी बिल्कुल समाप्त हो गया। यह सब आत्म-बल से ही सम्भव हुआ जो "त्याग-तपस्या की संस्कृति" का ही प्रताप था, न कि "भोग-विलास की संस्कृति" का।

आत्म-बल आध्यात्म की एक शक्ति है। यह आवश्यक नहीं कि आत्म-बल सज्जनों में ही एकत्रित हो। यह दुष्ट व्यक्तियों में भी आ जाता है और व्यक्ति सज्जन होते हुए भी इससे रहित होकर कष्ट भोगता है। कहने का तात्पर्य यह है कि जो भी व्यक्ति किसी बात को अपनी आत्मा से सही मानकर आत्मा से उस कार्य को संचालित करने लगता है वह उस बिन्दु विशेष के लिए आत्मबली हो जाता है। मैनें एक लुटेरे को देखा जो पुलिस के पहरे से भाग गया था और जिसके पीछे पुलिस पड़ी थी। वह मुम्बई से भागकर लखनऊ आया और यहाँ तीसरे दिन पकड़ा गया, जब स्टेशन पर उतरकर एक सार्वजनिक नल पर वह पानी पी रहा था। वह पिछले तीन दिनों से भूखा था और उसकी जेब में एक भी पैसा नहीं था लेकिन अपनी भूख-शान्ति के लिए उसने किसी के भी आगे हाथ नहीं फैलाया। यह उसका आत्म-बल था जिसके पीछे उसकी यह सोच थी कि हाथ फैलाकर माँगने से मर जाना ज्यादा अच्छा है। ऐसी दृढ़-निश्चयी सोच जब आत्मा में बसती है तो वही से वह आत्म-बल के रूप में सक्रिय हो कर अपना कार्य करती है। वह व्यक्ति इस मामले में ईमानदार था और तपस्या का अर्थ ईमानदारी से जीवन व्यतीत करना है। तप से आत्म बलवती होती है। तप निरन्तर ईमानदारी पर अडिग रहते हुए त्याग करते रहने से उत्पन्न होता है। एक सरकारी नौकर ईमानदारी से अपना कार्य करता है, घूस नहीं लेता, आम जनता के प्रति अच्छा व्यवहार भी रखता है, यह देखते हुए भी कि उसके अन्य सहकर्मियों ने घूस लेकर बिल्डिंगे खड़ी कर ली हैं। एक दूकानदार मिलावटी सामान नहीं बेचता है, नाप-तौल ठीक है, दाम भी वाजिब हैं, जबकि वह देखता है कि दूसरे दूकानदार ग्राहकों को पट्टी पढ़ाकर सामान बेंचकर दुगना-

तिगुना मुनाफा कमा रहे है। इसी प्रकार अनेकों ऐसे लोग हैं जिनकी आत्मा में ईमानदारी है और वे ईमानदारी का तप कर रहे हैं। इनमें आत्म-बल है जिसके कारण यह ईमानदारी का जीवन-यापन विपरीत परिस्थितियों में भी कर पा रहे हैं। ईमानदारी से अर्जित धन-सम्पदा का निश्चयात्मक परिणाम यह होता है कि इनके बच्चे बड़े होकर अपने माँ-बाप के प्रति मन से सेवाभावी व आदर रखने वाले होते हैं तथा अपने परिवार के प्रति-सदैव उत्तरदायी बने रहते हैं, जबकि बेईमानी से अर्जित धन सम्पदा से पले बढ़े बच्चे बड़े होकर अपने माँ-बाप के प्रति वह सम्मान नहीं रखते जिसकी लालसा उनके माँ-बाप अपने मन में रखते हैं, अपितु देखा तो यह जाता है कि ऐसे बच्चे बड़े होकर अपने वृद्ध माँ-बाप के प्रति उदासीन भाव रखने वाले अथवा फिर उनका ह्रदय-विदीर्ण करने वाले होते हैं। यह बिल्कुल सत्य बात है और इसमें कोई संशय नहीं है।

इसलिये सच्चे अर्थों में यदि जीवन का सुख भोगना है, सक्षम बने रहना है तथा वृद्धावस्था में भी तनाव-मुक्त जीवन का पूरा आनन्द उठाना है तो अभी से भोग-विलास की संस्कृति छोड़कर त्याग-तपस्या की संकृति में आना पड़ेगा। ज्यादा मसालेदार व चटपटा भोजन करने वाले कई लोगों को मैंने यह कहते सुना है कि जबसे उबला खाने लगे, तला-मसालेदार भोजन अच्छा ही नहीं लगता। अब स्वास्थ्य भी ठीक रहता है। जैसा खाने में, वैसा ही जीवन के हर क्षेत्र में। देखते ही देखते आपका जीवन ही बदल जायेगा। आपको लगेगा कि आपको एक नया जीवन मिला है। महाकवि सूरदास की गूँगे के रस वाली कहावत आपके जीवन में चरितार्थ हो जायेगी।

5. चुनौती स्वीकार करें

संसार में अनेकों ऐसे लोग हैं जो यूँ तो आगे न बढ़ पाते लेकिन चुनौतियाँ होने के कारण अर्थात सामने चुनौतियाँ आ जाने एवं उन्हे स्वीकार कर कटिबद्ध हो जाने को फलस्वरूप आगे बढ़ गये। प्राय: आप अपने जीवन में सफलता के लिये, उसे आगे बढ़ाने के लिए कोई योजना बनाते हैं, कार्य प्रारम्भ कर रहे होते हैं या सफलता से दूर होते हैं तो ऐसे लोग मिल जाते हैं जो कहते है 'आप यह काम नहीं कर पायेंगे' अथवा कहते हैं 'छोड़ों, दूर हटो, आपसे यह काम नहीं हो पायेगा, ‘‘क्यों खामख्वाह जान खपा रहे हो'’ यह चुनौती है और जब इस चुनौती पर आप यह सोचते हैं कि नहीं, कैसे नहीं, कैसे भी हो यह काम हम अवश्य पूर्ण करेगे, तो समझ लीजिये कि आपने चुनौती स्वीकार कर ली है, आप कटिबद्ध हो गये हैं। निश्चित समझिये सफलता आपके चरण चूमेगी। यह सफलता मिलने पर आपका आत्मविश्वास अपने शिखर पर होगा। जीवन में चुनौतियाँ स्वीकार करने की आपकी राह जो पहले बन्द पड़ी थी, खुल जायेगी, आसान हो जायेगी। फिर आप यही सोचेंगे कि भला कौन सा ऐसा काम है जो आप कर नहीं सकते। आपकी यह सोच, चुनौती स्वीकार कर कटिबद्ध

हो जाने, दृढ़प्रतिज्ञ हो जाने की क्षमता बढ़ जाने के कारण विकसित हुई है और यह आपको जीवन में अनेकों सफलतायें देगी।

आज की फिल्मों के मशहूर गायक 'उदित नारायण ने रेडियो पर दिये गये एक इण्टरव्यू में बताया कि जब वे गायन के लिए मुम्बई की एक सराय में रहकर प्रयास कर रहे थे तो उसी सराय में फिल्म जगत के एक व्यक्ति भी थे जो फिल्मों के संगीत क्षेत्र में जाने की कोशिश में लगे थे और उन्हें एक फिल्म में अवसर भी मिल गया था। उन्होंने उदित नारायण से गाना सुना। गाना सुनने के बाद उन्होंने कहा कि उदित नारायण तुम गायन का क्षेत्र छोड़कर एक्टिंग में कुछ प्रयास करो तो शायद तुम्हें कुछ सफलता मिल जाये। उदित नारायण जी आगे बताते है कि लगभग 15 वर्षों पश्चात् उनसे उनकी मुलाकात हुई। वे उदित नारायण जी को पहचान न सके लेकिन उदित नारायण उन्हें पहचान गये। उन्होंने किसी बात के सिलसिले में उदित से कहा : 'क्या गजब का गाते हो'। तब उदित नारायण ने 15 वर्ष पूर्व जब वे सराय में रहते थे, उस समय का उल्लेख किया और बताया कि मैं वही उदित नारायण हूँ। वे सज्जन हतप्रभ थे।

ऐ रास्ता रोकने वालों, तुम्हें मालूम नहीं,
तुमने पैगाम दिया है, मुझे आगे बढ़ने का।

बालि के बारे में कहा जाता है कि शत्रु के सामने आने पर शत्रु की आधी ताकत बालि के पास पहुँच जाती थी और बालि की ताकत दोगुनी हो जाती थी तथा शत्रु की आधी। इसका सीधा अर्थ यह था कि बालि में चुनौती स्वीकार करने की प्रबल इच्छा-शक्ति थी और इसी कारण उसका आत्मविश्वास बढ़ा चढ़ा था। जब शत्रु उसके सामने आता था या उसे ललकारता था तो उसकी चुनौती स्वीकार करने की इच्छा-शक्ति बलवती होकर प्रचण्ड वेग से उसके आत्मविश्वास को ऊपर उठा देती थी

जिसका परिणाम यह होता था कि बालि अपने शत्रु को कुछ नही समझता था और इसप्रकार आत्मविश्वास से भरे बालि को देखकर उसका शत्रु सहम जाता था जिसके कारण उसकी स्वयं की ताकत आधी रह जाती थी और कहा यह जाता था कि बालि सामने आये अपने शत्रु की आधी ताकत खींच लेता था।

एशियाड खेलों में एक भारतीय पहलवान ने अपने से डेढ़ फुट ऊंचे दूसरे देश के एक पहलवान को चारों खाने चित कर भारत को कुश्ती का स्वर्ण पदक दिलवाया। उस समय के तत्कालीन प्रधानमंत्री भी यह कुश्ती देख रहे थे और उस पहलवान की कुश्ती देखकर वे इतना अभिभूत हुए कि उन्होंने उसे तत्काल आश्वासन दे डाला कि वे दिल्ली पहुँचते ही उसकी नौकरी का इंतजाम करा देंगे क्योंकि यह पहलवान एक गरीब परिवार से ताल्लुक रखता था तथा शौक होने के कारण किसी प्रकार खर्च चलाकर कुश्ती लड़ता था। इस पहलवान ने जो गरीबी के कारण अपने इस शौक को आगे न बढ़ा सका, ने दिल्ली दूरदर्शन द्वारा लिये गये एक इण्टरव्यू में कहा था कि उसने पहलवान को कभी पहलवान

नहीं समझा। उसका यह कथन चुनौती स्वीकार करने की उसकी दृढ़-इच्छाशक्ति को दर्शाता है जिसकेकारण ही वह साधनों के अभाव में भी अपने देश के लिए इतना बड़ा पदक जीतने में सफल रहा।

आजादी के पूर्व एक ओलम्पिक खेल में हाकी का फाइनल मैच जर्मनी की राजधानी बर्लिन में खेला जाना था। यह मुकाबला भारत और जर्मनी के बीच था। जर्मनी एक सशक्त देश की एक सशक्त टीम थी जबकि भारत एक गुलाम देश था। मेजर ध्यानचंद भारतीय हाकी टीम के कप्तान थे। टीम के मैनेजर ने भारतीय हाकी टीम के खिलाड़ियों को बुलाया। उनके हौसले बुलन्द करते हुए, उन्हें 'तिरंगे झण्डे' की कसम दी। सभी खिलाड़ियों ने इस चुनौती को स्वीकार किया। अगले दिन मैच प्रारम्भ हुआ। वहाँ हिटलर भी मौजूद था। इस मैच में भारत ने एक गोल किया, दूसरा, तीसरा, चौथा, पाँचवा, अब हिटलर ने ध्यानचन्द की स्टिक बदलवा दी, लेकिन यह क्या फिर छठवाँ गोल उसी बदली हुई स्टिक से ध्यानचन्द ने कर दिया। यही नहीं, हिटलर की इस चुनौती को ध्यानचन्द ने और आगे बढ़कर स्वीकार किया। उन्होंने स्टिक वापस कर दी। अगला गोल उन्होंने एक डण्डे से खेलकर किया। इस मैच में भारत जर्मनी के विरूद्ध 8-1 से विजयी रहा, चुनौती स्वीकार करने वालों ने इतिहास रच दिया था। यह मैच देखकर हिटलर इतना अभिभूत हुआ कि उसने ध्यानचन्द के लिये यहाँ तक कह दिया कि यह व्यक्ति जर्मनी आ जाये तो वह उसे चांसलर बना देगा।

चुनौती स्वीकार करने वाले इतिहास रच देते हैं। इतिहास का रूख मोड़ देते हैं। राणा संग्राम सिंह एक महान और विकट योद्धा । संसार उन्हें 'राणा साँगा' के नाम से जानता है। दूर-दूर तक उनकी तूती बोलती थी। 'बाबर' एक विदेशी, राणा साँगा की शह पर पानीपत की लड़ाई में इब्राहीम लोदी को परास्त कर चुका था। अब दिल्ली छोड़कर अपने देश वापस जाने के बजाय वह दिल्ली की गद्दी पर ही विराजमान हो गया, राणा साँगा ने सोचा था कि लुटेरे तैमूर का वंशज लूटपाट कर वापस चला जायेगा और वे सहज ही दिल्ली की गद्दी पर भी अधिकार जमा लेंगे। लेकिन ऐसा न हुआ और दिल्ली की गद्दी पर अधिकार जमाने के लिए युध्द अनिवार्य हो गया।

राणा साँगा का इतना प्रताप था कि भारत के समस्त राजे-महाराजे राणा साँगा के झण्डे तले एकत्रित हो गये। वैसे भी राणा साँगा के प्रताप को सुनकर बाबर के सैनिकों के हौंसले पस्त थे और अभी-अभी पानीपत की लड़ाई से उसके सैनिक थके हुए भी थे, किन्तु बाबर ने देखा कि यही मौका है और अभी नहीं तो फिर कभी नहीं। उसने युद्ध के दौरान डरकर भागते हुए अपने सैनिकों को 'अल्लाह' का वास्ता दिया। कहा कि अगर मारे जाओगे तो 'अल्लाह' तुम्हें 'जन्नत' देगा और अगर जिन्दा रहे तो राज्य करोगे। इतिहास जानता है कि राणा साँगा की चुनौती को बाबर और उसके सैनिको ने स्वीकार किया और इतिहास का रूख मोड़कर रख दिया। चुनौती स्वीकार करने वाले हारी हुई बाजी को जीत में बदलकर रख देते हैं। आपने स्वयं भी देखा होगा कि कैसे किसी टीम के खिलाड़ी अपनी प्रतिपक्षी

सशक्त टीम से हारते हुए भी चुनौती स्वीकार कर लेने के कारण अपने हौंसले पस्त नहीं होने देते हैं और दोगुने हौंसले से जूझकर लगभग हारा हुआ मैच अन्तिम समय में अपने पक्ष में कर लेने में सफल हो जाते हैं। ऐसे ही यह जिन्दगी भी एक मैच है और आपको इसमें आयी चुनौतियाँ स्वीकार करनी हैं, अपनी अन्तिम साँस तक जूझते रहना हैं, हौंसला पस्त नहीं होने देना है। आपको मालूम है। जिस क्षण आप चुनौती स्वीकार करते हैं उसी क्षण आपकी जीत लगभग तय हो जाती है। आप अकेले हैं तो भी कोई परवाह नहीं। रवीन्द्रनाथ टैगोर की 'एकला चलो रे' की उक्ति सार्थक करें।

हम तो चले थे अकेले ही जानिबे मंजिल मगर,
ज्यों-ज्यों बढ़ते गये, लोग जुड़ते गये।

आप अगर सोचते हैं कि आप अमुक चुनौती स्वीकार करने की स्थिति में नहीं है और आप यह भी समझते हैं कि आप यदि वैसी स्थिति में होते तो आप उस चुनौती को अवश्य स्वीकार करते, तो क्यूँ न आप इस चुनौती को स्वीकार करें कि आपको वैसी स्थिति में अपने को लाना है। मैनें अपनी दादी से सुना था कि एक सम्पन्न जमींदार परिवार के किसी सालाना कार्यक्रम का उद्घाटन करने के लिए एक जज साहब को आमन्त्रित किया गया था और इस हेतु सजावट करके सोफे व कुर्सियाँ आदि लगायी गयी थीं। जिस कुर्सी पर माननीय जज साहब को बैठना था, उस पर उद्घाटन के पूर्व लगभग 11-12 वर्ष की उम्र का एक गरीब बालक जाकर बैठ गया। आयोजकों ने कान पकड़कर और दुत्कार कर उसे समारोह से बाहर भगा दिया। बात आयी-गयी हो गयी। इस घटना के लगभग 35 वर्ष बाद उसी स्थान पर उसी जमींदार परिवार के उसी वार्षिक जलसे का उद्घाटन कर बैठे माननीय जज साहब ने अपने उद्घाटन भाषण में उन बुजुर्गवार जमींदार को जो उस पूर्व घटना के समय जवान थे, को सम्बोधित करते हुए कहा कि आपको जरूर याद होगा कि आज से लगभग 35 वर्ष पूर्व इसी कुर्सी पर नादानीवश बैठ गये एक गरीब बालक को कान पकड़कर किस प्रकार आपने दुत्कारते हुए समारोह से भगा दिया था। जज साहब का इतना कहना था कि बुजुर्ग हो गये उन जमींदार महोदय के स्मृति-पटल पर पूरा वाकया आ गया। जज साहब ने आगे कहा कि मैं वही नादान बालक हूँ जिसे आज ससम्मान इस भव्य जलसे का उदघाटन करने के लिए बुलाया गया है और यह वही कुर्सी है जिस पर बैठने पर मुझे अपमानित होना पड़ा था और आज इस पर मुझे ससम्मान बैठाया जा रहा है। बुजुर्ग जमींदार मंच पर आकर अपने उस कृत्य के लिये माफी माँगने लगे और कहा कि उन्हें वह घटना आज भी याद है और वे भूले नहीं हैं। लेकिन जज साहब ने कहा- नहीं, आपने ऐसा करके बड़ा उपकार किया। आपने उस नादान गरीब बालक में चेतना का संचार कर दिया और उसी क्षण बाजाय निराश होने के उस बालक ने इसे एक चुनौती के रूप में लिया था। आगे जज साहब ने बताया कि कैसे गरीबी के कारण उन्होने दूसरो के घर से बाहर आती हुई रौशनी में माँगकर लायी हुई किताबें ले जाकर पढ़ी हैं, क्योकि उनके घर में इतना पैसा भी न

था कि वहाँ रात्रि में कुछ देर रोज चिराग जलाया जा सकता। जज साहब ने उस जमींदार महोदय का बहुत-बहुत शुक्रिया अदा किया और कहा कि यदि वे आज इस पद पर पहुँचे हैं तो उन्ही जमींदार महोदय के कारण। जाते समय उनहोंने जमींदार के पैर छूकर आशीर्वाद भी लिया। अपने लक्ष्य को चुनौती के रूप में स्वीकार कर लेने से उसकी प्राप्ति सुनिश्चित हो जाती है।

जीवन में किसी एक बात को लेकर निरन्तर उसे गुढ़ते रहना, कुढ़ते रहना, मनुष्य को कुंठित बना देता है। लम्बे समय तक जैसे रूका हुआ पानी सड़ने लगता है और मच्छर भी रूके हुए पानी में ही अण्डे देते हैं, बहते पानी में नहीं। इसीलिये किसी बात को लेकर जीवन को रोकिये नहीं। चुनौती समझकर उसका सामना कीजिये और फिर हरि इच्छा बलवान, परिणाम को ईश्वर का प्रसाद मानकर ग्रहण करें, क्योंकि संसार में जो कुछ भी होता है, वह किसी की मर्जी से नहीं वरन ईश्वर की मर्जी से होता है।

फ्रांस का महान सेनापति नेपोलियन बोनापार्ट अत्यधिक दुबला-पतला था, लेकिन इससे क्या। चुनौतियाँ स्वीकार करने की अदम्य क्षमता ने उसे फ्रांस के सेनापति के पद पर पहुँचा दिया और उसने अपना पूरा जीवन युद्धों के बीच बिताया तथा लगभग 200 लड़ाईयों का नेतृत्व किया। एक अत्यन्त दुबला-पतला नव-युवक दो बार सेना में भर्ती होने के लिए गया किन्तु दोनोंबार इसी कारण उसका चयन नहीं हो सका। तीसरी बार एक सैनिक के रूप में वह चुन लिया गया। सन् 1965 के भारत-पाक युद्ध के दौरान अदम्य साहस का प्रदर्शन करते हुए उसने शत्रु के अनेक बंकर अकेले ध्वस्त कर दिये। वह देश के लिए शहीद हो गया। मरणोपरान्त भारत सरकार ने उसे वीर-चक्र से सम्मनित किया। चुनौती स्वीकार करने वाले कुछ ऐसे ही होते है। वे हीनता को अपने पास फटकने नहीं देते। उन्हें मालूम है कि कोई भी मनुष्य पूर्ण नहीं होता। कोई न कोई कमी हर किसी में कही न कहीं होती है, चाहे वह राजा दशरथ ही क्यों न रहे हो लेकिन उस कमी को चुनौती मानकर ऐसे कार्य कर देते हैं कि उसके आलोक में वह कमी, कमी नहीं दिखलायी पड़ती है। जबकि चुनौतियाँ स्वीकार न करने वाले अपनी कमी का रोना रोते रहते हैं या उसे लेकर गुढ़ा करते है- कुढ़ा करते हैं, इससे उनकी कमी और उजागर हो जाती है। शराब-सिगरेट पीना शुरू कर देते हैं और इस कारण उनमें जो कुछ अच्छा होता है, वह भी बदसूरत लगने लगता है, जग-हँसाई अलग से होती रहती है। आप जानते हैं कि एडोल्फ हिटलर प्रथम विश्व युद्ध से पूर्व मात्र एक साधारण पेण्टर था। प्रथम विश्वयुद्ध में वह एक सैनिक के रूप में सम्मिलित हुआ था। तत्पश्चात जर्मनी का चांसलर बनकर उसने दिवतीय विश्वयुद्ध किया। कहा जाता है कि वह नपुंसक था। नपुंसक होना किसी भी युवा-व्यक्ति के लिये एक बहुत बड़ा अभिशाप है। लेकिन फिर भी वही बात कि चुनौतियाँ स्वीकार करने वाले कभी किसी कमी को अभिशाप के रूप में अपने जीवन पर हावी नहीं होने देते हैं। फिल्मी जगत के सुपर स्टार अमिताभ बच्चन दमा जैसे असाध्य रोग से पीड़ित रहते रहें हैं। भारत की उत्कृष्ट कवियित्री 'तोरू

दत्ता', जिसकी अँग्रेजी रचना, 'सावित्री' को अंग्रेजी साहित्य में अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है और जिसे उसकी इस साहित्यिक रचना के कारण अंग्रेजी साहित्य में अंग्रेज साहित्यकारों ने उसे ऊँचा स्थान दिया है, मात्र 21 वर्ष जीवित रहीं जिसमें से 18 वर्ष लम्बी बीमारी के कारण वह बेड पर ही पड़ी रहीं और बिस्तर पर ही पड़े-पड़े उसने उक्त रचना लिखी।

कोई व्यक्ति जो दिखने में अत्यधिक कुरूप है। इसके कारण निराशा व कुण्ठा से ग्रसित हो सकता है। हीनता की भावना उस पर हावी हो सकती है। ऐसे व्यक्तियों के लिए जीवन केवल एक भार होता है। ऐसा इसलिये नहीं है कि वह कुरूप है, बल्कि ऐसा इसलिये है कि उनकी सोच की दिशा गलत है। इस कुरूपता को एक चुनौती के रूप में उन्होंने स्वीकार नहीं किया जैसे 'सुकरात' ने किया था। सुकरात तो बहुत ही ज्यादा कुरूप थे, फिर भी वे सदा दर्पण पास रखते थे और बार-बार मुख देखते थे। एक मित्र ने इस पर आश्चर्य किया, और पूछा, तो उन्होंने कहा: 'सोचता यह रहता हूँ कि कैसे इस कुरूपता का प्रतिकार मैं और अधिक अच्छे कार्यों को करके, उन कार्यों की सुन्दरता बढ़ाकर कर सकता हूँ। इस तथ्य को याद रखने के लिये दर्पण देखने से सहायता मिलती है।'

बहुत से लोगों को यह कहते सुना जाता है कि यदि उनके साथ ऐसा-ऐसा होता तो वे आज ऐसे सफल होते। वस्तुत: चुनौतियों और वास्तविकताओं से दूर रहने की अपनी सोच के कारण ही वे ऐसा करते हैं। वह भूलते हैं कि जीवन की वास्तविकताओं से भागकर नहीं जिया जा सकता है, अपितु जीवन की सफलता, उनका सामना करने में ही निहित है। 'मीठा-मीठा गप और कड़वा-कड़वा थू' आप या कोई भी नहीं कर सकता। जीवन में यदि मिठास है तो कड़ुवाहट भी आयेगी ही, यह निश्चित है। ऐसे में आप कड़ुवाहट को एक चुनौती के रूप में लेकर उसे मिठास की दिशा में भी ले जा सकते हैं, जैसाकि हिन्दी के महान उपन्यासकार मुंशी प्रेमचन्द्र ने किया था। उनकी पत्नी बहुत झगड़ालू थी और आये दिन उनसे किसी न किसी बात पर झगड़ा करती। जैसे ही वह झगड़ा शुरू करती मुंशी प्रेमचन्द्र लिखने बैठ जाते फिर लिखना जो शुरू होता तो वे लिखते ही रहते। यह था इस महान उपन्यासकार की रचनाओं का राज।

सन 1947 में देश के बँटवारे के पश्चात तमाम पंजाबी परिवार भारत आयें। इनमें से कुछ उत्तर प्रदेश भी आये। वे उस समय कैसी हालत में आये थे और आज किस हालत में हैं, कौन नहीं जानता, महज चुनौती स्वीकार करने की उनकी प्रवृत्ति उन्हें तरक्की के मुकाम पर ले गयी। उत्तर प्रदेश राज्य के जनपद लखीमपुर, पीलीभीत आदि तथा नैनीताल (उत्तरांचल) के तराई-क्षेत्रों की बंजर पड़ी भूमि सरकार ने इन्हें कृषि हेतु आवण्टित की थी। लेकिन इसे चुनौती मानकर सिक्ख परिवारों ने स्वीकार किया। आज इनकी जमीनें सोना उगल रही हैं। ये सभी अत्यन्त समृद्ध हो गये हैं, तत्कालीन परिस्थिति को चुनौती के रूप में स्वीकार करने के ही कारण। अन्यथा उस जमीन को लिये ये आज तक रोते ही रहते। जीवन

की हर कठिनाई, हर परेशानी को चुनौती के रूप में स्वीकार करने से आगे बढ़ने के रास्ते खुलते जाते है और इसका अभ्यास करते रहने से, चारों तरफ आपदा से घिरे होने पर भी आप इन चुनौतियों का सामना करने में आनन्द का अनुभव करेंगे। चुनौतियों को स्वीकार करने, उनका सामना करने में आप हिचकिचायेंगे नहीं, घबड़ायेंगे नहीं वरन डटकर धीरज के साथ उनका मुकाबला करने में आप अपने को एक हिम्मती योद्धा के रूप में पाकर आनन्दित अनुभव करेंगे और मरते दम आप यह सोचकर संतोषपूर्वक प्राण छोड़ सकेंगे कि आपने अपने दायित्वों को निभाने में अपनी ओर से भरसक कोशिश की है, बाकी तो ईश्वर की मर्जी है ही, उसमें भला आप या कोई भी क्या कर सकता था। होना वही था जो ईश्वर की मर्जी थी, लेकिन आपने उस ईश्वर के दम पर प्रयास तो किये। यह संतोष कुछ कम नहीं है कि जीवन की आखिरी साँस तक आप चुनौतियों का सामना करते रहे। इसीलिये तो ईश्वर ने जीवन दिया था और यही मुकाबला ही तो जीवन का प्रतीक है वरना भला मुर्दा कहाँ-किस चुनौती का मुकाबला करता है। ईश्वर के दिये जीवन की सार्थकता चुनौतियों का सामना करने में ही है अन्यथा जिन्दा मनुष्य और मुर्दे में भेद ही क्या रह जायेगा ?

6. प्रार्थना

जिन्दगी में आपने ऐसे वाकये देखे होंगे जिनके चलते कुछ लोग बुरी तरह हताश हो जाते हैं और अत्यन्त हीन-भावना से ग्रसित होकर मुर्दनी के शिकार हो जाते हैं। वे शराब पीने लगते हैं या कोई अन्य दुर्व्यवसन पाल लेते हैं, जैसे खूब सिगरेट पीना या अन्यप्रकार के नशा, जैसे- वेश्यागमन आदि करना और कुछ आत्महत्या की हद तक पहुँचकर जीवन से वास्ता तोड़ लेते हैं। जब कोई मनुष्य इस प्रकार का आचरण करने के लिए अपने को विवश पाता है तो यह अत्यन्त कठिन समय होता है। यहाँ यदि वह रूक न पाया और कदम इस ओर आगे बढ़ा दिया तो निश्चित ही पतन की गर्त में चला जायेगा और वहाँ से अपने बूते पर बाहर निकल पाने में वह अपने को असहाय महसूस करता है। यह और भी कठिन समय है। छोटे सामान्यजन नहीं अपितु अत्यन्त सम्भ्रान्त माने जाने वाले व्यक्ति भी इस प्रकार की कुण्ठाओं से ग्रसित होकर पतन की गर्त में डूबते देखे गये हैं।

ऐसे कठिन समय में क्या करना चाहिये? कैसे उबरा जा सकता है ऐसी विषम परिस्थितियों से? ऐसी ही कठिन परिस्थितियों के शिकार, वख्त के मारे, जिन्दगी से विमुख ‘राजा भर्तृहरि’ भयानक जंगल में भटक रहे थे। 'राजपाट' सब छोड़ आये थे, जो प्राणो से भी अधिक प्रिय थे और जिन पर इतना विश्वास करते थे कि विश्वास की थाह न थी, उन्होंने विश्वासघात कर दिया था। अब 'भर्तृहरि' के लिए जीवन के प्रति कोई मोह न था। 'राजपाट' उनके लिये काँटों भरा शूल था, उसे तिलांजलि दे दी थी। जिन्दगी अवसाद से भर गयी थी। क्या करें, क्या न करें, कुछ समझ में नहीं आ रहा था। कभी सोचते कि क्यों न

इस जीवन का ही अन्त कर लूँ तो कभी कुछ और बातें मन में आतीं। ऐसे ही कठिन वख्त पर जंगल में इधर-उधर विचरते राजा 'भर्तृहरि' देखते हैं कि अर्न्तध्यान में निमग्न कोई साधू आँखें बन्द किये कुछ बुदबुदा रहे हैं। 'भर्तृहरि' समीप आते हैं। देखते हैं कि यह तो बाबा गोरखनाथ हैं। उनकी बुदबुदाहट की आवाज अब बिल्कुल स्पष्ट सुनाई पड़ रही थी। वे कह रहे थे- रे मन प्रार्थना कर, प्रार्थना कर मेरे मन, प्रार्थ्ाना कर। प्रार्थ्ाना में बड़ा बल होता है। प्रार्थ्ाना से जमीन-आसमान एक हो सकता है, प्रार्थना से क्या नहीं हो सकता। प्रार्थना से सब कुछ हो सकता है। प्रार्थना कर मेरे मन, प्रार्थना कर। राजा 'भर्तृहरि' के निराशा की अतल गहराईयों में डूब चुके दु:खित मन ने प्रार्थना की। आज संस्कृत-साहित्य की अमूल्य-निधि और विश्व की बेजोड़ रचना 'भर्तृहरि शतक', राजा भर्तृहरि की प्रार्थना के पश्चात के दिनों की, उनकी देन है जो उन्हें अमर बना गयी।

तमाम हकीमों और वैद्यों की नाकाम कोशिशों के पश्चात मौत के मुँह में जाते अपने इकलौते पुत्र और राज्य के एकमात्र वारिस हुमायूँ को उसके पिता 'बाबर' ने मात्र अल्लाह से की गयी प्रार्थना की बदौलत ही बचा लिया था। द्रोपदी की लाज कैसे बची, मात्र प्रार्थना की बदौलत। गज को मगर से कैसे छुटकारा मिला, केवल और केवल प्रार्थना के कारण।
सच्चे-सरल और कातर हृदय से ईश्वर से की गयी प्रार्थनायें कभी व्यर्थ नहीं जातीं। ईश्वर उन्हें तत्काल सुनता है। थोड़ा सा धीरज रखो, हर रात्रि के बाद सवेरा निश्चित है। जब कोई वश न चले तो ईश्वर से प्रार्थना करना। इसे भूलना नहीं। जब ऐसे कठिन वख्त आयें तो शराब-सिगरेट में मत डूब जाना वरन ईश्वर की शरण में चले जाना, उनसे रो-रोकर प्रार्थना करना। ऐसा हो नहीं सकता कि वह न सुने। थोड़ा धीरज रखना। वे सुनेंगे अवश्य। वहाँ थोड़ी देर हो सकती है, पर अँधेरा नहीं है।

"हारिये न हिम्मत, बिसारिये न राम"

प्रार्थना से मन को शक्ति मिलती है। मृतप्राय मनुष्य पुन: जी उठता है और वह जीवन की चुनौतियों का नये सिरे से सामना करने के लिए तत्पर हो जाता है।

7. ब्रह्मचर्य

सारी सफलताओं की महान कुंजी है : संयम। वीर्य रक्षा से मनुष्य ऐसा सामर्थ्य प्राप्त करता है कि वह जीवन के जिस क्षेत्र में सफल होना चाहे, हो सकता है। क्योंकि इससे शरीर-बल के साथ आत्म-बल की भी वृध्दि होती है।

रसाद्रक्तं ततो मांसं मान्सान्मेद: प्रजायते।
मेदास्यास्थितृ ततो मज्जा मज्जाया शुक्रसम्भव॥

अर्थात : 'जो भोजन पचता है, उसका पहले रस बनता है। पाँच दिन तक उसका पाचन होकर रक्त बनता है। पाँच दिन बाद रक्त से माँस, उसमें से पाँच-पाँच दिन के अन्तर

से मेद, मेद से हड्डी, हड्डी से मज्जा और मज्जा से अन्त में वीर्य बनता है। स्त्री में जो यह धातु बनती है उसे 'रज' कहते हैं।

अगर वीर्य को संयत किया जाये तो 'ओज' बनता है। उससे एक गुप्त नाड़ी जागृत होती है, जिससे आत्म-ज्ञान का सीधा सम्बन्ध है।

-श्री सुश्रुताचार्य जी

कुछ पाने के लिए कुछ करना पड़ता है, कुछ छोड़ना पड़ता है, और इस करने व छोड़ने हेतु कुछ उपाय होते हैं। मेरा एक मित्र जो उस समय छात्र था को, सिनेमा-हाल में कुछ लड़कों ने किसी कहासुनी के दौरान मिलकर पीट दिया। पिटने के बाद उसने कुछ मित्रों को एकत्र कर बदला लेने की योजना बनायी लेकिन इस बीच उसे अकेला पाकर पुन: दूसरे ग्रुप के लड़के ने पीटा। इस पिटायी के बाद उसके मन में अपनी शारीरिक-शक्ति बढ़ाने की जरूरत महसूस हुई। यह आवश्यकता रंग लायी। उसने सिगरेट पीना और चौराहे से गुजरती लड़कियों पर छींटा-कसी करना बंद कर दिया। सुबह की दौड़, कसरत तथा तेल-मालिश शुरू हो गयी। अखाड़े जाकर कुश्ती के दाँव-पेंच भी अजमाने लगे। लड़कियों की तरफ देखना तो दूर, उनकी बातें करना भी अब इन्हें नागवार था। अब ब्रह्मचर्य इन्हे सबसे प्रिय था, उस पर किसी भी तरह आँच नहीं आने देना चाहते थे। नतीजा यह हुआ कि मात्र छ: माह में यह महाशय कालेज के छात्रों के बीच हीरो बन चुके थे। आज ये पुलिस में इंस्पेक्टर हैं। जीवन में हितकारी योजनायें बनाना और उन्हें कारगर ढंग से लागू करना ब्रह्मचर्य के बलबूते पर ही सम्भव है क्योंकि यह वह शक्ति है जो ऐसा आत्म-विश्वास पैदा करती है जिससे व्यक्ति जो चाहे कर सकता है। नेता जी ने विदेश जाकर अप्रवासी भारतीयों की सेना खड़ी कर दी। पं. मदन मोहन मालवीय ने पास में कुछ भी धन न होते हुए भी काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की स्थापना कर दी। महात्मा गाँधी ने, प्रचार-प्रसार के आज जैसे साधन न होते हुए भी, अँग्रेजों के विरूध्द जन-जन में चेतना जाग्रत करा दी। यह सब ब्रह्मचर्य के बलबूते पर उत्पन्न प्रबल आत्म-विश्वास की ही कहानी है। निस्सन्देह आप भी ब्रह्मचर्य के बलबूते पर बहुत कुछ कर सकते हैं। किसी ओजस्वी व्यक्ति को देखकर आप प्रभावित होते हैं। युवा और प्रौढ़वस्था में जब शरीर में प्रचुर वीर्य रहता है, पूर्ण ब्रह्मचर्य धारण करके, उचित खानपान व नित्यप्रति सूर्योदय-पूर्व की सैर द्वारा आप भी वैसा ही बन सकते हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं है और न ही काले-गोरे का सवाल है। कितने ही काले लोगों के चेहरे पर मैंने 'ओज' देखा है, यह ब्रह्मचर्य की बदौलत ही था।

रामप्रसाद नाम का एक वृध्द जिनकी 107 वर्ष की आयु में मृत्यु हुई, अन्त तक मुझे तेजोमय दिखलायी पड़े। मोहल्ले के लोग बताते हैं कि सन 1960 में लखनऊ में आयी गोमती नदी की प्रलयंकारी बाढ में वे जानबूझ कर खदरे वाले पक्के पुल से कूदे थे और तैरते व गोता खाते हुए हनुमान सेतु तक आये थे। उस समय उनकी उम्र लगभग 75 वर्ष की थी। आप सोचेंगे कि ऐसे विकट व्यक्ति का दुनिया में नाम उजागर क्यों नही हुआ। इस बारे

में बताना चाहूँगा कि उस दौर के व्यक्ति महान शक्तिशाली होते हुए भी अपने को चर्चा में नहीं आने देना चाहते थे। नाम-बड़ाई से वे अपने को कोसों दूर रखते थे। हम लड़को का 'रामप्रसाद' जिन्हें हम 'दद्दा' कहकर पुकारते थे, से हँसी-मजाक भी होता था। जब हम लोग उनसे कहते थे कि दद्दा इस उम्र में भी जवानी जैसी ताकत और चेहरे पर इस 'तेज' का आखिर राज क्या है? तो वे कहते थे कि बेटा, हम लोग छ:मास में एक बार अपनी स्त्री के पास जाते थे। तुम लोग रोज ही। इस पर जब हम यह करते कि छ:मास तो बहुत लम्बा समय होता है, दद्दा आपने जिन्दगी का कुछ मजा नहीं लिया। इस पर दद्दा बड़े जोर से हँसते और कहते कि बेटा छ:मास तक पूर्ण बह्मचर्य से रहने के बाद जब स्त्री के पास जाते थे तो इतना आनन्द आता था कि उसका असर अगले छ:मास तक बना रहता था। तुम लोगों के आनन्द का असर (मजा) तो 24 घण्टे भी नहीं रह पाता और फिर पहुँच जाते हो। दद्दा की बात में वास्तव में दम था। कभी भी इसे आजमा कर देखिये। लम्बे समय तक पूर्ण ब्रह्मचर्य से रहने के बाद मात्र एक या दो सहवास में आपको जो आनन्द आयेगा। वह अवर्णनीय होगा, जो लम्बी अवधि के ब्रह्मचर्य के फलस्वरूप आपके मन-मस्तिष्क को तरोताजा रखेगा व शरीर निरोग रहेगा तथा रोजमर्रा के कार्यों में उत्साह रहेगा, तनाव नहीं रहेगा। चेहरे पर तेज रहेगा अलग से। जबकि छोटे-छोटे अन्तराल पर किये गये सहवास से उत्पन्न होने वाला आनन्द क्षणिक होता है और पश्चात में खीज, तनाव व जिन्दगी के रोजमर्रा के कार्यों को निस्तेज करने वाला बनाता है। जिन्दगी की प्रगति ठहर सी जाती है और आगे बढ़कर काम करने का हौंसला न रह जाने से व्यक्ति अवनति की तरफ जाने लगता है। जरा भी प्रतिकूलता सहन नहीं होती। अब जरा उन पर नजर डालिये जो एक दिन भी ब्रह्मचर्य से नही रहते। उनके बारे में कबीरदास जी ने कहा है:-

'नारी की छाईं परत, अँधा होत भुजंग।
कबिरा तिनकी कौन गति, जिन नित नारी को सँग॥'

दद्दा का कहना था- **'खाओ, पचाओ और बचाओ,।**

सब प्रकार के मैथुन के त्याग का नाम ही ब्रह्मचर्य है। मैथुन के निम्नलिखित प्रकार शास्त्रों में बतलाये गये हैं:

1. **स्मरण :** किसी सुन्दर स्त्री के रूप लावण्य अथवा हाव-भाव, कटाक्ष एवं श्रंगार का स्मरण करना, कुत्सित पुरूषों की कुत्सित क्रियाओं का स्मरण करना, अपने द्वारा पूर्व में घटी हुई मैथुन आदि क्रिया का स्मरण करना, भविष्य में किसी स्त्री के साथ मैथुन करने का संकल्प अथवा भावना करना। पूर्व में देखे हुए किसी सुन्दर स्त्री अथवा बालक के चित्र अथवा अश्लील चित्र का स्मरण करना- ये सभी मानसिक मैथुन के अन्तर्गत हैं। इनसे वीर्य का प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से नाश होता है और मन पर तो बुरा प्रभाव पड़ता ही है।

2. श्रवण : गन्दे तथा कामोद्दीपक एवं श्रंगार-रस के गानों को सुनना, श्रंगार-रस का गद्य-पद्यात्मक वर्णन सुनना, स्त्रियों के रूप-लावण्य तथा अंगों का वर्णन सुनना, उनके हाव-भाव, कटाक्ष का वर्णन सुनना, काम-विषयक बातें सुनना आदि, ये सभी श्रवण मैथुन के अन्तर्गत हैं। इससे भी प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष रूप से वीर्य का क्षरण होता है।

3. कीर्तन : अश्लील बातों का कथन, श्रंगार-रस का वर्णन, स्त्रियों के रूप-लावण्य, यौवन एवं श्रंगार की प्रशंसा तथा उनके हाव-भाव, कटाक्ष आदि का वर्णन, विलासिता का वर्णन, कामोद्दीपक अथवा गन्दे-गीत गाना तथा ऐसे साहित्य को स्वयं पढ़ना और दूसरों को सुनाना तथा कथा आदि में ऐसे प्रसंगों को विस्तार के साथ कहना - ये सभी कीर्तन-रूप मैथुन के अन्तर्गत हैं और वीर्य-क्षरण का कारण हैं।

4. प्रेक्षाण : स्त्रियों के रूप-लावण्य, श्रंगार तथा उनके अंगो की रचना को देखना, किसी सुन्दर स्त्री अथवा सुन्दर बालक के रूप या चित्र को अश्लील-भाव से देखना। इसीप्राकर नाटक-सिनेमा देखना, कामोददीपक वस्तुओं तथा सजावट के सामान को देखना। ये सभी प्रेक्षण रूप मैथुन के अन्तर्गत हैं और वीर्य-क्षरण का कारण बनते हैं।

5. केलि : स्त्रयों के साथ हँसी-मजाक करना, नाचना-गाना, आमोद-प्रमोद के लिये क्लब वगैरह में जाना, गन्दी चेष्टायें करना, स्त्री-संग करना आदि - ये सभी केलि-रूप मैथुन के अन्तर्गत हैं और वीर्य-क्षरण प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष कराते हैं।

6. श्रंगार : दूसरों के चित को आकर्षित करने के उद्देश्य से किया हुआ किसी प्रकार अपने शरीर को सजाने का कार्य श्रंगार-मैथुन के अन्तर्गत है और अन्तत: यह भी वीर्य को किसी न किसी रूप में विनिष्ट कराने में सहायक होता है।

7. गुह्य भाषण : स्त्रियों के साथ एकांत में अश्लील बातें करना, उनके रूप लावण्य, यौवन एवं श्रंगार की प्रशंसा करना, हँसी-मजाक करना - ये सभी गुहय-भाषण रूप-मैथुन के अन्तर्गत हैं और प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष रूप से वीर्य-नाश का कारण बनते हैं।

8. स्पर्श : काम-बुध्दि से किसी स्त्री अथवा बालक का स्पर्श करना, चुम्बन करना, आलिंगन करना, कामोददीपक पदार्थों का स्पर्श करना आदि ये सभी स्पर्श रूप मैथुन के अन्तर्गत हैं और वीर्य-नाश का अप्रत्यक्ष या प्रत्यक्ष कारण हैं।

उपर्युक्त बातें पुरूषों को लक्ष्य में रखकर ही कही गयी हैं। स्त्रियों को भी पुरूषों के सम्बन्ध में यही बात समझनी चाहिये।

उपर्युक्त आठों प्रकार के मैथुन का सर्वथा त्याग करने से ही वीर्य की सर्वोत्तम-रक्षा होती है और यही पूर्ण ब्रह्मचर्य है। विद्यार्थी-जीवन के दौरान तो पूर्ण-ब्रह्मचर्य अनिवार्य है, यदि उन्हें वाकई, जीवन जीने लायक बनाना है। इसके अलावा वे लोग जो भले ही शादी-शुदा हों तब भी माह में दो बार से अधिक स्त्री-संसर्ग न करें और बीच के अन्तराल में उपर्युक्त आठों प्रकार के मैथुन से अपने को बचायें। इसके दो फायदे तत्काल नजर आने लगेंगे। एक तो यह कि आपका अपने पर विश्वास बढ़ेगा, शरीर में सर्दी-गर्मी सहन करने की

क्षमता बढ़ेगी, मानसिक-सन्तुलन मजबूत होगा, तनाव नहीं रहेगा, मन प्रसन्न रहेगा तथा बड़ी विपत्ति आने पर भी धैर्य नहीं छूटेगा, बुध्दि तीव्र हो जायेगी, दूसरे के मन पर प्रभाव डालने की शक्ति आयेगी आदि-आदि। दूसरा फायदा यह होगा कि अपनी स्त्री के साथ संसर्ग करने पर आपकी स्तम्भन-क्षमता बढ़ेगी और स्तम्भन-काल लम्बा खिंचेगा, जो आप दोनों को परम-संतुष्टि देगा और मस्तिष्क तनाव-रहित हो जायेगा।

अब सवाल यह है कि उपर्युक्त आठों प्राकर के मैथुन से कैसे बचा जाये अर्थात पूर्ण ब्रह्मचर्य का निर्वहन कैसे किया जाये। इस सन्दर्भ में हम पहले कह चुके हैं कि कुछ पाने के लिए कुछ करना पड़ता है और कुछ छोड़ना पड़ता है। पहले तो यही इरादा पक्का करें, क्योकि इसमें जो आप पायेंगे वह करने और छोड़ने की अपेक्षा आपके लिये कितना अधिक मूल्यवान है, इस पर कुछ देर एकान्त में आपको विचार कर लेना है, अथवा यूँ समझिये कि यदि इस दुनिया में इज्जत से जिन्दा रहना है तो पूर्ण-ब्रह्मचर्य के उपर्युक्त स्वरूप को अपनाना ही होगा। इसके लिये अधोलिखित उपायों पर भी नजर डालें:

1 . प्रयास यह करें कि भोजन में उत्तेजक पदार्थ न रहें या इनकी मात्रा न के बराबर रहे- जैसे मिर्च, राई, गरम-मसाले, अचार, खटाई, अधिक मीठा और अधिक गर्म चीजें नही खानी चाहिये। भोजन सादा, ताजा और नियमित समय पर करना चाहिए। माँस आदि अभक्ष्य पदार्थ और शराब, गाँजा, भाँग आदि अन्य नशीली वस्तुयें नहीं खानी चाहिए। एक बात और, और वह यह है कि चाहे जितना स्वादिष्ट भोजन क्यों न हो कभी ठूँस कर नहीं खाना चाहिए, बल्कि सदैव भूख से एक-दो रोटी कम खायें। इसका पैमाना यह है कि जब आपका मन करें कि थोड़ा और खा लें तो बस वही अपने को रोक दीजिये। दो-चार बार ऐसा करने से आपको इसका अभ्यास हो जायेगा। भोजन धीरे-धीरे खूब चबाकर करना चाहिये। भोजन में एक-दो कच्ची चीजें अवश्य हों जैसे- कच्चा टमाटर या मूली पत्ता सहित या हरी धनिया, चुकन्दर, शलजम आदि। भोजन सोने से कम से कम दो घण्टे पूर्व अवश्य कर लें तथा रात्रि का भोजन हल्का होना चाहिए।

२ . यथासाध्य नित्य खुली हवा में सबेरे और सायंकाल पैदल घूमना चाहिए।

3. देर रात्रि तक जागने का परित्याग करें और जल्दी सोकर सूर्योदय से कम से कम घण्टे भर पूर्व अवश्य उठ जाना चाहिए। सूर्योदय से पूर्व मल-त्याग आसानी से होता है और पेट भी साफ रहता है।

4. सोते समय पेशाब करके, हाथ-पैर धोकर तथा कुल्ला करके भगवान का स्मरण करते हुए सोना चाहिये और प्रात: जब बिस्तर छोड़े तो भी प्रभु का स्मरण करते हुए उठें। रात्रि में यदि नींद टूट जाये तो भी उस समय प्रभु को स्मरण कर लें।

5 . कुसंग का सर्वथा त्याग कर यथासाध्य सदाचारी भगवत भक्त सत्पुरूषों का संग करना चाहिये जिससे मलिन वासनायें नष्ट होकर ह्दय में अच्छे भावों का संग्रह हो।

6. पति-पत्नी को छोड़कर अन्य स्त्री-पुरूष अकेले में कभी न बैठें और न एकान्त में बातचीत ही करें।

7. भगवत-गीता, रामायण, महाभारत, उपनिषद, श्रीमदभागवत अथवा अपने-अपने धर्म के उत्तम ग्रन्थों का नित्य नियमपूर्वक स्वाध्याय करना चाहिये। इससे बुद्धि शुद्धि होती है और मन में गन्दे विचार नहीं आते।

8 . ऐश-आराम, भोग, आलस्य, प्रमाद और पाप में समय नहीं बिताना चाहिए। मन को सदा किसी न किसी अच्छे काम में लगाये रखना चाहिये।

9. मूत्र-त्याग और मल-त्याग के बाद इन्द्रिय को ठण्ड़े जल से धोना चाहिये और मल-मूत्र की हाजत को कभी नहीं रोकना चाहिये।

10 . यथासाध्य ठण्डे जल से नित्य प्रात: स्नान करना चाहिये।

11. नित्य नियमित रूप से किसी प्रकार का व्यायाम करना चाहिये। हो सके तो नित्य प्रति कुछ आसान एवं प्राणयाम का अभ्यास करना चाहिये।

12. कसरत करते समय लँगोटा अवश्य बाँधना चाहिये।

13. नित्य नियमित रूप से कुछ समय तक परमात्मा का ध्यान अवश्य करना चाहिए। ध्यान-योग अर्थात मेडीटेशन की ब्रह्मचर्य-पालन में बहुत बड़ी भूमिका है, इसे अधिक से अधिक समय तक और अधिकाधिक बार करें, जब कभी खाली हों और करने को कुछ न हो या समय बिताना हो, आप आराम से आराम की मुद्रा में ही सही, भले ही लेटे हों, ध्यान-योग का अभ्यास करें। आप देखंगे कि कुछ समयोपरान्त आपका मन वासनात्मक बातों से स्वयं ही हटने लगेगा, आपको अपूर्व शान्ति का अनुभव होगा, चेहरा तनाव-रहित हो जायेगा और एक अन्दर की बात भी आपको बता देते हैं, वह यह कि आप होंगे चालीस वर्ष के तो लगेंगे तीस वर्ष के। जब से आप मेडीटोन अर्थात ध्यान-योग प्रारम्भ करेंगे तो उस समय आपकी जो उम्र होगी, वहीं पर दस-दस, पन्द्रह-पन्द्रह वर्ष ठहर जायेगी लिहाजा लोगों को आपकी सही उम्र का अन्दाजा लगाना मुश्किल हो जायेगा।

14 . यथाशक्ति भगवान के किसी भी नाम का प्रेम-श्रदधापूर्वक जप-कीर्तन करना चाहिये। काम-वासना जाग्रत हो तो नाम-जप की धुन लगा देनी चाहिये, अथवा जोर-जोर से कीर्तन करने लगना चाहिये। काम-वासना नाम-जप और कीर्तन के सामने कभी ठहर नहीं सकती।

15 . पुरूषों को स्त्री के शरीर में और स्त्रियों को पुरूषों के शरीर में मलिनत्व-बुद्ध करनी चाहिये। ऐसा समझना चाहिये कि जिस आकृति को हम सुन्दर समझते है, वह वास्तव में चमड़े मे लपेटा हुआ माँस, अस्थि, रूधिर, मज्जा, मल, मूत्र, कफ आदि मलिन एवं अपवित्र पदार्थों का एक घृणित पिण्ड मात्र है।

16. महीने में कम से कम दो दिन उपवास करना चाहिये और एक दिन केवल एक ही समय अर्थात दिन में भोजन करना चाहिये। यह भोजन फलाहारी हो जिसमें कूटू या

सिंघाड़े का आटा सम्मिलित कर सकते हैं। उपयुक्त दो दिन के उपवास मे से एक दिन का उपवास आप बिना शक्कर और बिना नमक के करें, क्योंकि शक्कर और नमक दोनों ही लगभग विष का कार्य करते हैं। मास में एक दिवस का उपवास यदि बिना नमक और बिना शक्कर का होगा तो यह आपके शरीर को सन्तुलन प्रदान करेगा इस अवधि में आप केवल फल और दूध पर रह सकते है।

17. भगवान की लीलाओं तथा महापुरुषों एवं वीर ब्रह्मचारियों के चारित्रों का मनन करना चाहिये, जैसे - किस संकट में पुकारने पर कैसे भगवान ने द्रोपदी की लाज बचायी, गज को ग्राह से बचाया आदि-आदि।

18. प्रात: स्नान के बाद ध्यानपूर्वक ओउम् का जाप करना चाहिये इससे वीर्य का तेज नीचे से उठकर पेट-हृदय से होता हुआ सिर में पहुँचता है और मस्तक पर ओज व तेज के रूप में विराजमान होता है तथा यह क्रिया ब्रह्मचर्य-पालन में सहायक होती है।

19. नित्य-निरन्तर भगवान को स्मरण रखने की चेष्टा करनी चाहिये, उनके उपकारों का स्मरण करना चाहिये। आखिर जिस भवन में आप रहते हैं, जो रोज आपको खाने को मिलता है और जो पग-पग पर राह चलते आप एक्सीडेण्ट इत्यादि से बचते रहते हैं, भूलो-मत, यह सब उस प्रभु की ही कृपा है, मेहरबानी है।

ऊपर जितने उपाय साधन बताये गये हैं, उनमें अन्तिम साधन सबसे उत्तम तथा सबसे अधिक कारगर है। यदि नित्य-निरन्तर अन्त-करण को भगवत-भाव से भरते रहने की चेष्टा की जाये तो मन में गन्दे-भाव कभी उत्पन्न हो ही नहीं सकते है। किसी कवि ने क्या ही सुन्दर कहा है :

जहाँ राम तहँ काम नहिं, जहाँ काम नहिं राम।
सपनेहूँ कबहुँक रहि सकें, रवि रजनी इक ठाम।।

जिसप्रकार सूर्य के उदय होने पर रात्रि के घोर अन्धकार का अन्त हो जाता है, उसी तरह जिस हृदय में भगवान अपना डेरा जमा लेता हैं, अर्थात नित्य:निरन्तर भगवान का स्मरण होता है, वहाँ काम का उदय भी नहीं हो सकता। अत: ब्रह्मचर्य की रक्षा करने के लिये नित्य-निरन्तर भगवान का स्मरण करते रहना चाहिये।

'संयमी पुरुष की स्मरण-शक्ति, मेधा, आयु, आरोग्यता, पुष्टि, इन्द्रियों की शक्ति, शुक्र, कीर्ति और शक्ति सभी बढ़ी हुई रहती हैं तथा उसको बुढ़ापा देर से आता है।'

- अष्टांगहृदय सूत्र

8. मुसीबत, कार्य और उनको निपटाना

मुसीबत किस पर नहीं आती है। क्या कोई संसार में ऐसा भी है जिस पर मुसीबत न आयी हो? ऐसा कोई नहीं है। बस फर्क इतना है कि किसी पर कम और किसी पर ज्यादा। एक फर्क यह भी है कि मुसीबत आते ही कुछ लोगों के हाथ-पैर फूल जाते हैं। वे एकदम

घबड़ा उठते हैं। लेकिन इससे क्या मुसीबत दूर हो जाती है? ऐसा करके वे अपनी मुसीबत कम करने के बजाय उसे और बढ़ा लेते हैं जो तनाव का कारण बन जाता है। कुछ ऐसे भी लोग देखे जाते हैं जो मुसीबत पड़ने पर शान्त हो जाते हैं अर्थात अपने मस्तिष्क को ठण्डा कर लेतें यानी धैर्य धारण कर लेते हैं और फिर अपना ध्यान उन उपायों एवं कार्यों को ढूंढ़ने में लगा देते हैं जिनको करने से उनकी मुसीबत कम हो सकती है या दूर हो जायेगी। इसके पश्चात् वे इस बात को सोचते हैं कि इन कार्यों को कैसे और किस ढंग से करना ज्यादा सही है। यह व्यावहारिक रूप-रेखा निर्धारित करने के बाद वे इसे क्रमबद्ध करते हैं अर्थात सबसे पहले क्या किया जाये, फिर उसके बाद कौन सा कार्य करना होगा। इस तरह एक-एक करके इस योजना के सभी कार्य क्रमबद्ध करने के बाद सबसे अन्त का कार्य वे निर्धारित करते हैं। अपने ठण्डे दिमाग से चुपचाप अथवा आवश्यकता अनुभव होने पर अपने हितैषियों के सहयोग से वे अपनी पूरी कार्य-योजना तैयार कर लेते हैं। अब दूसरा चरण प्रारम्भ होता है। यह व्यावहारिक-चरण है। अपनी सोची हुई योजना को मूर्तरूप प्रदान करना है। इसमें बहुत सी विघ्न-बाधायें आती हैं और इनके कारण ऐनमौके पर योजना में थोड़ा फेर-बदल भी करना पड़ सकता है लेकिन उसे भी अपना हित, आगा-पीछा ध्यान में रखकर करना है न कि किसी दबाब में या घबड़ा जाने के कारण। अब आप देखेंगे कि आपका मस्तिष्क कार्य-योजना की रूप-रेखा बनाने में और एक-एक करके उसे व्यावहारिक-रूप प्रदान करने में व्यस्त हो जाने के कारण मुसीबत के क्षणों में भी तनाव-ग्रस्त होने से काफी कुछ बचा रहा। मुसीबत, मुसीबत बनकर तो आयी लेकिन धैर्यपूर्वक योजना बनाकर कार्य करके जिस तरह आपने उसको निपटा दिया, उसके कारण मुसीबत का उग्र-रूप ठण्डा हो गया। एक बार इसतरह कार्य निपटाने के ढंग को अपना लेने से आपको प्रत्येक कार्य इसी तरह रूप-रेखा बनाकर निपटाने में सहजता, सहूलियत महसूस होने लगेगी। मुसीबतें दूर होंगी। कार्य सफल होंगे और यदि कार्य सफल न भी हों तो भी आपको इस बात का मलाल नहीं रहेगा कि आपने कुछ किया नहीं या फिर आप हाथ पर हाथ धरे बैठे रहें। बल्कि इस बात का संतोष होगा कि आपने भरसक कोशिशें कीं और जितना हो सकता था, वह किया। यही सन्तोष आपको तनाव से भी दूर रखेगा।

ऐसे लोग जिनका दिल घबराता है या वे लोग जो नहीं भी घबराते हैं, उनके लिये भी शुद्ध शहद एक मुफीद टॉनिक है। मुसीबत दूर करने के लिये योजना के अनुसार कार्य पर निकलने से पहले एक चम्मच शुद्ध-शहद चाट लीजिये और ऊपर से दो-एक घूँट जल पी लीजिये। आपके दिल को मजबूती मिल जायेगी।

कभी-कभी मनुष्य के पास कार्यों का इतना बड़ा अम्बार लग जाता है कि आदमी देखकर परेशान हो जाये, क्योंकि समय भी उसके पास कम होता। समय कम और कार्य अधिक लिहाजा तनाव। लेकिन ऐसे मौकों पर कुछ लोग ऐसे भी होते हैं जो परेशान होने के बजाय धीरज से काम लेते हैं। हड़बड़ी या उतावलापन नहीं दिखाते और दिमाग इस बात पर

लगाते हैं कि कौन सा काम पहले किया जाये और कौन सा बाद में जल्दी ही उनके दिमाग में यह बात आ जाती है कि जो ज्यादा जरूरी है और जिनको न करने से काम बिगड़ सकता है, उन्हें पहले निपटा दिया जाये और अगर समय शेष रहा तो बाकी बचे काम भी निपटा देंगे। इसप्रकार वे एक-एक करके सभी काम निपटा देते हैं। कालान्तर में इसी अभ्यास के कारण कम समय में अधिक काम निपटाने की कला भी उनमें विकसित हो जाती है। कम समय में अधिक काम के अधोलिखित उपाय हैं :

1. ध्यान रहे कि हड़बड़ी में कोई कार्य नहीं करना चाहिये। हड़बड़ी का दिल पर बुरा असर पड़ता है। हड़बड़ी के बजाये धीरज से काम करने की आदत डालिये और अपने दिल को सुरक्षित रखिये। गोस्वामी तुलसीदास जी ने भी कहा है:

'धीरज, धर्म, मित्र अरु नारी, आपति-काल परखिये चारी।'

2. इसी प्रकार अधिक उतावलापन भी ठीक नहीं है।

3. योजना/रूपरेखा बनाकर कार्य करने की आदत डालिये। इससे आपकी सफलता का प्रतिशत बढ़ जायेगा। संतोष भी अधिक होगा। आपने देखा होगा कि पहले नक्शा बनाकर तैयार किये गये मकान बिना नक्शे के तैयार किय गये मकान से ज्यादा अच्छे होते हैं।

4. मुसीबत पड़ने पर या ऐसी कोई बात होने पर व्यक्ति को चाहिये कि वह तत्काल अपने दिमाग को मुसीबत से निपटने के तौर-तरीके सोचने ढूँढ़ने में लगा दे, उन्हें करने की योजना बनाये और फिर उन्हें एक-एक करके करें। मस्तिष्क के इसतरह व्यस्त हो जाने से तनाव अपनी जगह नहीं बना पाता है, जबकि इसके विपरीत खाली चिन्ता लेकर पड़े रहने से तनाव के रहने के लिये जगह मिल जाती है, क्योंकि चिन्ता और तनाव की आपस में मित्रता है, जबकि व्यस्तता से इनकी शत्रुता है। एक कहावत है कि वे लोग सुखी हैं जिन्हें आसमान की तरफ देखने की भी फुरसत नहीं है। यह भी कहा गया है कि खाली दिमाग शैतान का घर। इसलिये यदि तनाव से बचना है तो तनाव के शत्रुओं से मित्रता कीजिये।

उत्तर प्रदेश के एक बड़े शहर में दंगे थमने का नाम नहीं ले रहे थे। आखिरकार सरकार को जिलाधिकारी बदलता पड़ा। नये जिलाधिकारी ने पहुँचते ही ऐसे-ऐसे उपाय किये कि दंगाइयों के हौंसले पस्त हो गये और शीघ्र ही दंगे बन्द हो गये तथा शहर से कफ्यू उठा लिया गया। कालान्तर में इस वरिष्ठ आई.ए.एस. अधिकारी के सानिन्ध्य में मुझे भी कार्य करने का अवसर प्राप्त हुआ। मुझे यह देखकर अत्यन्त आश्चर्य हुआ कि यह तो एकदम सिम्पल हैं। कैसे इन्होंने पहुँचते ही दंगों पर काबू पा लिया। लेकिन जल्दी ही मुझे इस बात का आभास हो गया कि यह व्यक्ति जो दिखने में और एक, दो बार की मुलाकात में बिल्कुल साधारण-सा लगता है, वह वास्तव में एक ठण्डे मस्तिष्क का स्वामी है, जो अधिक न बोलकर उतना ही बोलता है जितना वास्तव में जरूरी है। कच्चे कान का नहीं है और सामने वाले को पूरी तरह पढ़ लेना जानता है तथा कार्यों को अंजाम देने के लिये एकान्त में रूप-रेखा बनाने में अपने को व्यस्त रखता है।

मुसीबत पड़ने पर उपाय करो। एक रास्ता बन्द होता है तो ईश्वर अनेक रास्ते खोल देता है। बस शर्त यही है कि शान्त और स्थिर चित्त होकर उपाय सोचो और अपनी शक्ति, क्षमता, स्थिति, परिस्थिति के अनुसार कोई एक रास्ता चुन लो, उस पर आगे बढ़ो। न सफल हो तो दूसरा रास्ता पकड़ो, तीसरा, चौथा, पर हिम्मत न हारो। सफलता अवश्य मिलेगी। पूरे मनोयोग से तत्पर हो।

सहसा उत्तेजना में आकर कोई कार्य मत कीजिये। थोड़ा सा ठहर जाईये। सोचिये कि क्या यह करना आपके हित में रहेगा। यदि नहीं तो फिर क्या करना, न करना आपके लिये हितकर रहेगा। यह तय कर लेने के बाद उस कार्य को कर डालिये। सड़कों पर या रेलवे-क्रासिंग पर लगाये गये ऐसे साइन-बोर्ड सम्भवत: आपने अवश्य देखे होंगे जिन पर लिखा रहता है - 'ठहरिये, देखिये, जाईये।'

9. शारीरिक स्वास्थ्य और तनाव

शारीरिक स्वास्थ्य का तनाव से सीधा और गहरा सम्बन्ध है। जब हम अस्वस्थ्य होते हैं तो उस दशा में हमारा कुछ काम करने का मन नहीं होता है। मन न होने पर भी काम करने से असंतोष होता है। इसके कारण चिड़चिड़ापन और मानसिक तनाव उत्पन्न हो जाता है। इसलिये इस तन अर्थात शरीर के स्वास्थ्य की ओर ध्यान देना, तनाव दूर रखने की प्राथमिक शर्तों में से एक है। जब शरीर स्वस्थ होता है तो मन न होने पर भी किये गये या हुए कार्यों से उत्पन्न क्षोभ को वह सहन कर लेता है और अग्रेतर हम तनाव से बच जाते हैं किन्तु शारीरिक अस्वस्थता की स्थिति में ऐसा करना कठिन हो जाता है। शारीरिक-स्वास्थ्य का अर्थ पहलवानी से नहीं है वरन शरीर बीमारी से बचा रहे - शरीर को ऐसी क्षमता प्रदान करने से है।

अच्छे स्वास्थ्य के लिये पंच-तत्व का सहारा लेना सबसे अच्छा, सर्वत्र सुलभ एवं कम से कम खर्चीला साधन है। यह समस्त संसार जिसमें रहकर हम जी रहे हैं और हमारा यह शरीर, पंच-तत्वों से मिलकर बना है। 'भगवान' शब्द में भी पाँच तत्व हैं। ये पाँच तत्व इस प्रकार से हैं। 'भ' से भूमि। 'ग' से गगन। 'अ' से अग्नि। 'न' से नीर अर्थात जल। इन सभी तत्वों का आपस में तालमेल है। इसमें से एक की भी कमी हमारे संसार को विनष्ट कर सकती है। हमारे शरीर को रोगी बना सकती है। जो लोग प्रकृति के इन पाँच-तत्वों का समुचित उपयोग करते हैं। रोगों से कोसों दूर रहते है। अक्सर आपने लोगों को कहते सुना होगा कि हम अपने बच्चों की इतनी देखभाल करते हैं फिर भी वे बीमार बने रहते हैं और इन भिखमंगों के बच्चों को देखों, अच्छा खाने-पीने को भी नहीं पाते हैं फिर भी स्वस्थ्य रहते हैं। हमारा आधुनिक जीवन प्रकृति के इन पंच-तत्वों से कोसो दूर होता जा रहा है। हम कृत्रिम-जीवन जी रहे हैं। इसी कारण हम और हमारे बच्चों की रोगों से लड़ने की क्षमता कम होती

जा रही है। जिस बनावटी जीवन-शैली को हम बहुत अच्छा मानते हैं, वही हमारे अनेक दु:खों का कारण है।

अब हम संक्षेप में पंच तत्वों के उपयोग और लाभों के बारे में बतायेंगे। सबसे पहले भूमि के उपयोग और लाभ का सरल वर्णन करते हैं।

भूमि अर्थात् पृथ्वी में मिट्टी मुख्य है। रात्रि में थोड़ी सी मुलतानी मिट्टी भिगोकर रख दें। साबुन की जगह इस मिट्टी से सुबह खूब मलमल कर नहायें। घमौर, फोड़ा-फुन्सी, दाग-धब्बें, कील - मुँहासे नहीं पैदा होंगे। यदि हैं तो धीरे-धीरे समाप्त होते जायेंगे। तन में चुस्ती-फुर्ती रहेगी। त्वचा रूखी नहीं रहेगी और जाड़ों में फटेगी भी नहीं।

रास्ते में गन्दगी न हो तो नंगे-पैर चलना भी लाभदायक है। रोज कुछ दूर भूमि पर नंगे पैर चलना चाहिये। रास्ते साफ न हों तो घास वाले साफ मैदान में टहलें। इससे एक्यूप्रेशर वाला लाभ भी सहज-स्वाभावित तौर पर मिलता है।

भूमि में दूसरा मुख्य तत्व पत्थर है। भोजन का मसाला हाथ से पत्थर की सिल पर ही पीसें। सिल पर पीसा गया मसाला लाभदायक होता है। शरीर को कई पोषक तत्व देता है। शरीर मजबूत बनता है। ध्यान रहे कि मिक्सी या बाजार की मसाला-चक्की के पत्थर से पिसा मसाला इस श्रेणी में नहीं आता है क्योंकि बिजली के मोटर से चला पत्थर अपनी गर्मी से पोषकता नष्ट करता है और विकार उत्पन्न करता है। आप अपने खाने भर का आटा घर की हाथ वाली चक्की से गेहूँ या अन्य अनाज पीस कर निकाल सकते हैं। इसके कई फायदे कालान्तर में आपको दिखलायी पड़ेंगे। मुख्य फायदा यह है कि आपका पेट साफ रहेगा यदि यह अनाज कण्डे या लकड़ी की आँच में पकाया जायेगा। सीजन के फल और सब्जियाँ भी पृथ्वी तत्व के अन्तर्गत ही आते हैं।

गगन अर्थात आकाश से भी लाभ प्राप्त करें। गर्मी के मौसम में खुले आकाश के नीचे सोयें। आकाश में ईथर नामक तत्व होता है। यह मन में प्रसन्नता लाता है। तन-मन की थकावट दूर करता है। आकाश का अर्थ शून्य से भी है। आप प्रतिदिन कुछ समय शून्य अर्थात बिल्कुल एकान्त में गुजारें, कुछ भी न सोचें, शून्य में पहुँच जायें। यह क्रिया आपको अतीव-शान्ति प्रदान करेगी।

वायु अर्थात हवा का लाभ तो सभी जानते हैं। कहते हैं कि देहात की हवा और शहर की दवा। प्रात: काल सूर्य निकलने से पहले प्रतिदिन लम्बी सैर करें। सैर के समय मुँह बन्द रखें। खूब तेज-तेज चलें और नाक से गहरी-गहरी श्वासें खींचते रहें, इससे खून साफ हो जाता है। बीमारी पास नहीं फटकेगी। यदि बीमारी है तो वह धीरे-धीरे छूमन्तर हो जायेगी। ध्यान रहे टहलते समय कुछ सोचें नहीं वरन प्रकृति का आनन्द लेते रहें।

प्रात:काल शुद्ध-वायु में खूब तनकर, खड़े हो जाइये अथवा आसन बिछाकर बैठ जाइये। छ:सेकेण्ड तक साँस खींचकर फेफड़ों में भर लें। चौबीस सेकेण्ड अन्दर रखें। बारह सेकेण्ड में इसे बाहर निकालें। दो बार ऐसा ही करें। फिर इसी प्रकार एक नाक से वायु

लेकर रोकें और उसी नाक से उपरोक्तानुसार निकालें। दूसरी नाक से भी ऐसा ही करें। इसे भी दोहरायें। अगले चरण में क्रमवार एक नाक से खींचें और दूसरी नाक से श्वांस निकालें। अन्त में पुन: दोनों नाक से साँस खींचकर रोकें और निकालें। इन सब क्रियाओं में समयावधि वही है - ६ सेकेण्ड, २४ सेकेण्ड और १२ सेकेण्ड। सेकेण्ड की जानकारी आप मन में गिनती गिनते हुए भी कर सकते हैं। श्वाँस रोकने के लिये श्वाँस अन्दर से रोकते हुए आप अपने अँगूठे से नाक बन्द कर सकते हैं। सबसे अन्त में तीब्रता से श्वाँस खींचियें और निकालिये।

दिल और साँस का रोग कभी न होने पाये इसके लिये ऊपर लिखा तरीका प्रतिदिन अपनायें बीमारी की स्थिति में इसे अपनी सुविधानुसार धीरे-धीरे करें। साँस लेने का यह तरीका प्रणायाम कहलाता है। यदि रोग पहले से है तो भी इससे बहुत लाभ होगा। प्राणायाम की एक दूसरी पद्धति और है, वह यह कि आप पहले शवासन की स्थिति में आयें और उसी स्थिति में लेटे-लेटे विना कोई अंग हिलाये-डुलाये उपर्युक्तानुसार दोनों नाम से प्रक्रिया पूर्ण करें। इस प्राणायाम से श्वसन-तन्त्र बेहद मजबूत हो जाता है और ह्रदय को बल मिलता है।

सूर्य अग्नि का भण्डार है। भूमि पर सूर्य की किरणें आती हैं। इसे धूप कहते हैं। जाड़े के मौसम में धूप अच्छी लगती है। प्रात:काल धूप में रहना बहुत लाभदायक है। जाड़े में दोपहर की धूप से भी लाभ होता है। धूप अधिकतर पीठ पर पड़नी चाहिये। जाड़े में खूब धूप खायें। कमरे में बिजली का हीटर न तापें, न ही बन्द जगह में हीटर पर खाना पकायें। यह खून की आक्सीजन कम कर देता है। इसका नुकासान सीधे तौर पर पता नहीं चलता है। कुछ समय बाद किसी बीमारी के रूप में सामने आता है और आप भाप भी न पायेंगे कि हीटर की वजह से यह बीमारी हुई है।

उगते हुए सूर्य को जल चढ़ाना बहुत लाभदायक है। सूर्य निकलने से पहले नहा लें। एक लोटे में पानी भर लें। उगते लाल सूर्य की तरफ दोनों हाथ ऊँचे करके श्रद्धावनत होकर जल की धारा गिरायें। इस गिरती जल-धारा से पलकें नीचे करके सूर्य को देखें और मन ही मन सूर्य को प्रणाम करें। सूर्य की रश्मियों में निहित अवरक्त-किरणें Infra Red Rays आँखों के माध्यम से सम्पूर्ण शरीर में प्रसारित हो जाती हैं। यह 'सूर्य-नमस्कार' है। कहते हैं कि संसार में कोई ऐसा रोग नहीं है जो 'सूर्य-नमस्कार' के माध्यम से ठीक न हो सके। 'सूर्य-नमस्कार' प्राचीन भारत की देन है। यह सभी रोगों को दूर कर देता है। इसे नियम से प्रतिदिन करना चाहिये।

सूर्य की किरणों से तैयार भोजन बहुत पौष्टिक और स्वादिष्ट होता है। हम सोलर-कुकर में यह भोजन तैयार कर सकते हैं। इसमें तैयार भोजन के पौष्टिक तत्व नष्ट नहीं होते हैं। समय, श्रम और धन की भी बचत होती है।

नीर अर्थात जल। नदियाँ जल की भण्डार हैं। नदी में नहाने से मन प्रसन्न होता है। पीने का जल शुद्ध होना चाहिये। सरकार ने स्थान-स्थान पर हैण्ड-पाइप लगवाये हैं। इनका जल

पीने के लिये सबसे उत्तम है। पीने के जल की कमी है। इसे बेकार नहीं करना चाहिये। जहाँ पीने का शुध्द जल उपलब्ध नहीं है- वहाँ पानी उबालकर व उसे छान कर पीना चाहिए और ऐसे जल में तीन-चार तुलसी की पत्तियाँ अवश्य डाले रहें। तुलसी-दल विषैले जीवाणुओं का नाश करता है।

प्रतिदिन कम से कम आठ-दस गिलास शुद्ध जल अवश्य पीना चाहिये। जल जाने पर तुरन्त बिना देर किये जला हुआ अंग पानी में आधा धण्टा डुबोये रखें। ऐसा करने से छाले नहीं पड़ेंगे व जलन मिट जायेगी। खाना खाते समय पानी बिल्कुल न पीयें अथवा खाने के बीच में घूँट दो घूँट से ज्यादा पानी न पीयें। लगभग डेढ़-दो घण्टे बाद पानी पीना शुरू करें।

बरसात में जब हल्की-हल्की फुहारें पड़ रही होती हैं। हमें उनका आनन्द लेना चाहिये। सुबह-सुबह ओस की बूँदों को सिर-माथे पर लगायें। आँखें की पलकों पर भी लगाना मत भूलें। सम्भव हो तो स्वच्छ घास पर पड़ी ओस से आँखें भी धो लें। आँखें सलामत रहेंगी।

प्रतिदिन प्रात:काल खुली जगह पर नहाना अधिक लाभदायक है। कहावत है कि सुबह सूर्य निकलने से पहले नहाना अमृत से नहाना है। सूर्य निकलने के बाद नहाना जल से नहाना है। सायंकाल में नहाना विष से नहाना है।

इतना सब बताने के बाद एक कहानी भी सुनाते हैं। ध्यान से सुनो : एक राजा था। महल में रहता था। अच्छे से अच्छा खाता था। नौकर-नौकरानियाँ चौबिसों घण्टे पंखे भी झला करते थे और इस हवा में मखमल के गद्दे पर सोता था। फिर भी उसको नींद न आती थी। राजा आए दिन बीमार भी रहता था। बहुत इलाज कराया। तरह-तरह की दवायें खायीं। लेकिन फिर भी बीमारी पीछा न छोड़ती थी। क्या बीमारी थी, वैद्य, हकीम, डाक्टर भी न जान पाते थे। राजा बहुत परेशान था। उसने अपने राज्य मे ऐलान करवाया। जो कोई उसकी बीमारी दूर कर देगा। उसे वह आधा राज-पाट दे देगा। आखिरकार एक वैद्य आया। उसने कहा-वह एक मास में राजा की बीमारी दूर कर देगा। राजा स्वस्थ हो जायेंगे। लेकिन एक मास तक राजा को उसके कहने के अनुसार दवा करनी होगी। राजा मान गया। तब वैद्य ने कहा-यहाँ से चार मील दूर जंगल में गंगा नदी के किनारे आँवले का एक पेड़ है। राजा को सूर्य निकलने से पहले वहाँ पहुँचना होगा। वह भी प्रतिदिन नंगे-पैर चलकर । वहीं पहुँचकर शौच जायें। नीम की दातून करें। पूरे शरीर पर मिट्टी का लेप करें। गंगा में नहायें। नहाने के बाद उगते सूर्य को जल देते हुए नमस्कार करें। इसके बाद आँवले के पेड़ से एक आँवला तोड़ें। यह आँवला लेकर नंगे-पैर वापस महल जायें।

पत्थर की सिल पर स्वयं आँवला पीसें। उसे शहद में मिलाकर चाटें। यह काम एक मास तक करें। साथ में वैद्य द्वारा दी गयी एक दवा रात्रि को सोते समय खायें। मरता क्या न करता। तमाम उपाय करके हार चुके राजा ने ऐसा ही किया। राजा धीरे-धीरे स्वस्थ होने लगा। एक मास पूरा होने से पहले ही राजा पूरी तरह स्वस्थ हो गया।

अब राजा पंच-तत्व की महिमा समझ चुका था। उसने यह क्रम कभी न छोड़ने की शपथ ली। वैद्य जी को वादे के अनुसार आधा राज-पाट भी दे दिया। राजा अब बहुत प्रसन्न रहने लगा था। कहावत है- स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मस्तिष्क निवास करता है। बहुत से लोगों को शिकायत रहती है कि उन्हें कब्ज रहती है। उनका पेट साफ नहीं रहता है। यही बात अनेक बीमारियों और अधिकतर होने वाले तनाव की जड़ है। अगर आप सूर्योदय से पूर्व उठकर बायें हाथ में पानी से भरा लोटा लेकर शौच के लिये नंगे पैर मैदान जायें, चलते जायें, और जब हाजत तेज महसूस होने लगे तो इस हेतु उपयुक्त स्थान पर किनारे (जहॉ शौचालय बना हो वहॉ) बैठकर मल-त्याग करें। पाखाना खुलकर होगा। पेट साफ रहेगा। शर्त यह है कि यह क्रिया सूर्योदय से पूर्व ही होनी चाहिये। (भयंकर रुप से बढ़ती आबादी के कारण इससे फैलने वाली बीमारियों आदि के दृष्टिगत अब खुली जगह पर शौंच आदि अपराध की श्रेणी में हैं और अब यह उचित भी नहीं है) शहर वालों के लिये कब्ज से छूटकारा पाने के उपाय अगले पाठ में दिये गये हैं।

अब थोड़ा घर की भी बात करते हैं। हमारा घर कैसा होना चाहिये। प्रकृति के पाँच-तत्व घर में भलीभाँति हों। शुद्ध-वायु आ जा सके। धूप आँगन में खिलखिलाये। आँगन से आकाश दिखलायी दे अर्थात आँगन में चाँदनी बरसे, बरसात में फुहारें पड़ती रहें, पूरा आँगन भिगोती रहें। थोड़ी कच्ची भूमि हो। साफ जगह पर एक हैण्ड-पाइप लगा हो। घर के मुहाने पर ही एक देशीपली हो। तुलसी का एक पौधा लगा हो। मालूम हो कि जिस घर में देशी गाय- तुलसी और पंच-तत्वों का स्वतन्त्र-वास है तो इस बात की गारण्टी है कि उस घर में किसी भी प्रकार का वास्तुदोष हो ही नहीं सकता है। यह एक आदर्श घर है। गोस्वामी तुलसीदास जी ने एक सुन्दर भवन की क्या सुन्दर परिभाषा दी है –

“ सुन्दर सदन सुखद सब काला “

अर्थात भवन ऐसा हो जो सब काल में यानी जाड़ा, गरमी, बरसात, दिन हो अथवा रात हर समय रहने वालों को सुख दे। यह तभी सम्भव है जब उस घर में पंच-तत्वों का स्वतन्त्र-वास हो।

यदि ऐसा घर नहीं है तो भी निराश न हों। ऐसे लोग भी हैं जिनके पास आदर्श घर हैं लेकिन वे प्रकृति के पंच-तत्वों का उपभोग नहीं करते हैं। इस कारण रोगी बने रहते हैं। आप प्रकृति के पंच-तत्वों का उपभोग करें। जीवन भर स्वस्थ रहेंगे।

कुछ उपाय और भी

1 . मौसम की सब्जियाँ, फल और अनाज का सेवन भरपूर करें। प्रकृति आपसे इसकी अपेक्षा रखती है। बेमेल भोजन भी न करें, जैसे खटाई के बाद दूध या दूध से बनी चीजें, दही के साथ मूली आदि-आदि। हो सके तो एक समय एक रस का ही भोजन करें, षट-रस वाला भोजन नहीं, जैसे-खट्टे के तुरन्त बाद मीठा, कडुवा, आदि-आदि। अर्थात मीठा खायें

तो मीठा ही, नमकीन खायें तो नमकीन, षटरस एक साथ न खायें। अधिक नमक और अधिक चीनी व वसा वाले भोजन से यथासाध्य परहेज रखने का प्रयास करें।

2 . एक पुरानी कहावत है - कम खाओं, गम खाओ। सदैव भोजन अपनी भूख से कुछ कम खाओ। इसकी तरकीब यह है कि जब आपको लगे कि थोड़ा और खा लें, बस वहीं पर अपने को रोक लीजिये। दो जून के बजाय चार जून खाओ लेकिन खाओ भूख से कम। यह बात आपका अच्छा स्वास्थ्य बनाये रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायेगी। कहा भी गया है- 'दो रोटी खायें जोगी, चार खायें भोगी और छ:खायें रोगी '। दूसरी बात यह है कि गम खाओ। एक चुप हजार बला टालती है। यह वह बात है जो आपकी हजार बलायें टालेगी। तमाम मानसिक-उलझनों से आप बच जायेंगे। पुराने लोग कहते भी थे- बड़ा वही जो गम खाये।

3 . प्रत्येक मनुष्य को प्रतिदिन सावधानी और सहजता से कुछ ऐसा काम अवश्य करना चाहिये जिससे उसे हल्का सा पसीना छलक जाये। साथ में ब्रह्मचर्यर् पालन का भी अधिकाधिक ध्यान रखें।

4. भगवत-भजन में, किसी अच्छे भजन-कीर्तन में जहाँ ताली बजा-बजाकर भजन-कीर्तन गाया जा रहा हो उसमें प्रतिदिन सम्मिलित हों। इससे जहाँ एक ओर आपका मन रमेगा वहीं दूसरी ओर एक्यूप्रेशर के कारण आप अनजाने में ही स्वास्थ्य-लाभ करेंगे।

5. सम्भव हो तो सुबह या शाम किसी फील्ड़-गेम जैसे-क्रिकेट, फुटबाल, बालीबाल, बैडमिण्टन या टेनिस आदि में सम्मिलित हों।

6 . लगभग हर व्यक्ति यह जानता है कि उसे क्या सूट करता है, वही खायें, वही करें जो उसे सूट करें। कहावत है- जो रुचै सो पचै।

7. देशी चीजों का सेवन आपके स्वास्थ्य के लिये सबसे अच्छा है। जैसे- देशी गुड़, देशी मठठा, देशी घी, देशी आम, देशी धनिया, देशी सिरका, देशी गाय का दूध इत्यादि। इसके अतिरिक्त सत्तू, फालसे, बेल का शर्बत, ठण्डाई आदि पीना, श्रीखण्ड आदि खाना। यह सब पहले के लोग सेवन किया करते थे तो उसी के अनुसार उनका स्वास्थ्य भी था। आज के लोग कोल्ड-ड्रिंक, फास्ट-फूड, पान-मसाला आदि का सेवन बहुतायत से करते हैं। यह झूठा खान-पान है। आप सच्चे खान-पान अर्थात देशी खान-पान को अपनाईये। स्वाद और स्वास्थ्य दोनो मिलेंगे। कोई साइड-इफेक्ट भी नहीं बस फायदा ही फायदा। हाँ, एक बात और है और वह यह कि जहाँ तक सम्भव हो अपने घर का बना खाना या पकवान खायें, बाजार का नहीं। क्यों?

जिस होटल का खाना आप सबसे अच्छा समझते हैं, आप वहाँ खाना खाइये। दो-चार, दस दिन, माह, दो माह, चार माह। आप ऊब जायेंगे। प्रारम्भ के दो-चार दिन जो खाना आपको स्वादिष्ट लगा था, बाद के दिनों में उसके कौर आपके गले से नीचे नहीं उतरेंगे। क्यों होता है ऐसा? इस बारे में हिन्दी के प्रतिष्ठित लेखक सरदार पूर्णसिंह ने लिखा है कि होटल आदि में

खाना बनाने वाले नौकर अपनी मजबूरीवश खाना तैयार करते हैं और परोसते हैं। उनका इस खाने को बनाने और परोसने में कोई आत्मिक-लगाव नहीं रहता। इसके परिणामस्वरूप मसाले आदि के बल पर तैयार किया गया यह बनावटी स्वादिष्ट भोजन शीघ्र ही अपनी असलियत आपके सामने प्रकट कर देता है। अब यह नीरस भोजन आप निगल तो लेते हैं लेकिन उसमें अब आपको कोई स्वाद नजर नहीं आवेगा। जबकि घर में माँ, बहन, बेटी, पत्नी आदि घर के सदस्य जो भोजन तैयार करते हैं- उसका बनाना और परोसा जाना एक आत्मिक-लगाव से जुड़ा रहता है। इसके सूक्ष्म-अणु इस भोजन में मिल जाते हैं। परिणामस्वरूप पूरी जिन्दगी आप भोजन करते हैं। लेकिन ऊबते नहीं हैं जैसे आप होटल में खाकर ऊब गये थे।

8 . अन्त में एक बात और, और वह सबसे महत्वपूर्ण बात यह कि मैंने एक बैंक के अत्यन्त उच्च अधिकारी को टेलीफोन पर अपनी बेटी से बातें करते सुना। वह कह रहे थे - बेटी, भोजन खराब नहीं होता है। वह अच्छा होता है। खा लो और भगवान को हाथ जोड़कर धन्यवाद दो कि ओ भगवान, आपको बहुत-बहुत धन्यवाद, जो आपने हमें खाने के लिये भोजन दिया है। हम आपके आभारी हैं।

10. वर्तमान में जिओ

कपूर साहब बड़ी खुशहाली से अपनी जिन्दगी जी रहे थे। अपनी पत्नी और बच्चों के साथ बहुत खुश थे। सोसायटी के समृद्ध और भाग्यवान लोगों में उनकी गिनती थी। इतनी खूबसूरत और सुन्दर आचरण वाली स्त्री भला किसको मिलती है? स्वयं कपूर अपनी धर्म-पत्नी की सराहना करते न थकते थे। लेकिन समय को यह मंजूर न था। कपूर को कहीं पता चला कि उनकी धर्म-पत्नी विवाह से पूर्व अमुक की हमबिस्तर रह चुकी हैं। थोड़ी सी टाल-मटोल के बाद पत्नी ने भी यह बात स्वीकार कर ली। हँसते-खेलते संसार में आग लग गयी। कपूर शराबी हो गये। इतना कि नाली में पड़े नजर आने लगे। भारत-सरकार में अधिशाषी अभियन्ता की सरकारी नौकरी भी जाती रही। शहर के प्रतिष्ठित कान्वेन्ट स्कूल में पढ़ने वाले दोनों बच्चों की पढ़ाई छूट गयी। परिवार खाने के लिये दाने-दाने का मोहताज हो गया। कपूर की धर्म-पत्नी नें अपने पति को राह पर लाने की जी-तोड़ कोशिश की। लेकिन वह सफल न हो सकी। एक प्राईवेट टीचर की नौकरी से जो मिलता था उससे किसी तरह घर का खर्च चलाती रही।

कपूर साहब काफी पढ़े-लिखे और समझदार व्यक्ति थे। वे जब अपनी हालत देखते तो स्वयं उबरने की कोशिश करते। लेकिन जब भी वे प्रयास करते, अपनी पत्नी के घटित जीवन की उधेड़-बुन में पड़ जाते और उससे बाहर न निकल पाते। भूत-काल की यह काली छाया उनके वर्तमान को नष्ट करने पर तुली थी।

कपूर साहब की दुर्दशा देखे और उनसे मुलाकात हुए एक अरसा बीत चुका था। एक दिन एक कार्यवश मेरा अपने पैतृक घर जाना हुआ। अचानक रास्ते में एक व्यक्ति को अपनी ओर आता और नमस्कार करता हुआ देखकर मैं थोड़ा ठिठका। मुझे कुछ लगा कि शायद यह कपूर हैं, लेकिन कपूर तो हो नहीं सकते क्योंकि शराब से हो गये उनके जर्जर शरीर को भी मैने देखा था लेकिन वे कपूर ही थे। उन्हें देखकर मैं हतप्रभ रह गया। मेरी हालत वे भांप गये और ठहाका मारकर खूब हँसे। कपूर साहब का चेहरा काफी तेजोमय दिखायी पड़ रहा था। उन्होंने स्वयं कहा-मेरी उस हालत को देखकर अब मेरी इस हालत पर ताज्जुब हो रहा है। चलो, घर चलो, बताता हूँ। मैं कपूर के साथ उसके घर गया। कूपर की धर्म-पत्नी चाय-बिस्किट लेकर आयीं। वे भी स्वस्थ-चित्त और काफी प्रसन्न दिख रही थीं। चेहरे पर पहले जैसी लावण्यता पुन: आ गयी थी। मैं यह सब देखकर वाकई बहुत हैरान था। क्योंकि जिन्हें सारा जग समझा-समझाकर हार चुका था। कैसे वह व्यक्ति सुधर गया।

मालूम हुआ कि कपूर साहब कहीं सुदूर बेटिकट रेल का सफर कर रहे थे। बेटिकट पकड़े जाने पर वे छ:माह के लिये जेल में बन्द रहे। वहाँ उन्हें शराब की बूँद भी मयस्सर न हो सकी। इस कारण धीरे-धीरे उनकी शराब की तलब खत्म हो गयी। शराब व्यक्ति की सोचने-विचारने और अच्छे-बुरे कार्य में फर्क रखने की झमता को गिरा देती है। जेल में ही शराब छूट जाने से कपूर की विवेक-बुद्धि पुन: जाग्रत हुई। उन्हें अपनी धर्म-पत्नी द्वारा उनके प्रति प्रेम और सद्भावना की प्रगाढ़ता की सच्चाई और अतीत की काली छाया के इतिहास की नश्वरता और पत्नी-बच्चों के प्रति अपने दायित्व की सच्चाई का बोध होने लग गया। वहीं एक कैदी से उन्हें श्रीमदभगवत गीता की व्याख्या पढ़ने को मिली तथा ध्यान-योग (मेडीटेशन) सीखने को मिला।

वह कैदी आजीवन-कारावास की सजा भुगत रहा था। किन्तु हत्या के जिस आरोप में उसे सजा हुई थी, उसमें वह निर्दोष था। अपने एक अजीज दोस्त की हत्या का उस पर आरोप था। ज्ञात हुआ कि उसके उस अजीज दोस्त को जब एक शख्स ने चाकू घोंपा, तो वह अपने दोस्त की सहायता के लिये दौड़कर आया लेकिन इस बीच वह शख्स चाकू पेट में घुपा छोड़कर भाग निकला। इन्होंने तुरन्त अपने दोस्त के पेट से चाकू निकाल कर अलग किया। इतने में कई लोग चिल्लाते हुए दौड़कर आये और इन्हें ही चाकू समेत पकड़ लिया। इस समय तक इनका दोस्त बेहोश हो चुका था। इनके लाख कहने पर भी लोगों ने इन्हें ही कातिल करार दिया और कहा-दोस्त ही तो दगा करते हैं। इस वारदात को शुरू से आखिर तक एक व्यक्ति ने भी देखा था। वह एक माननीय जज थे। लेकिन जैसाकि होता है, तथाकथित बड़े लोगों को पुलिस गवाही में लाने से बचती है और तथाकथित स्वयं भी इस काम में आगे नहीं आते।

संयोगवश यह मुकदमा उन्हीं जज साहब की अदालत में पेश हुआ जिन्होंने इस पूरे परिदृश्य को देखा था। कैदी आश्वस्त था कि वह छूट जायेगा। लेकिन पुलिस द्वारा जुटाये

गये सारे चश्मदीद गवाह और चाकू के हत्थे पर कैदी के निशान तथा मजबूत दलील देकर सरकारी वकील एवं अभियोजन पक्ष द्वारा मुकदमें हेतु लगाये गये वकील ने कैदी के गुनाहगार होने का पक्का सबूत पेश किया। किसी भी स्तर से बेगुनाही साबित होते न देख, कैदी ने अदालत में उस जुर्म को स्वीकार कर लिया जो उसने नहीं किया था। जज साहब हतप्रभ थे। सभी सबूतों के खिलाफ होने की वजह से मजबूरन उन्हें कैदी को आजीवन करावास की सजा सुनानी पड़ी। अदालत के बाहर जज साहब ने कैदी से पूछा कि आप तो निर्दोष थे, तो जुर्म क्यों स्वीकार कर लिया। कैदी का जवाब था कि जज साहब यह सही है कि यह जुर्म मैने नहीं किया, किन्तु इससे भी भयंकार अपराध मैंने किये हैं और साफ बच निकला। अत: यह सजा मेरे अपने कर्मों का फल है।

कपूर साहब कह रहे थे कि इस संसार में कुछ भी अकारण नहीं है। सभी बातों के पीछे कोई न कोई सटीक कारण है। सूर्य, चाँद, तारों का होना, समुन्द्र से लहरों का उठना, विभिन्न प्रकार के जीव, वनस्पतियों का होना, स्वयं मनुष्य के शरीर का बाहरी व अन्दरूनी गठन सभी कुछ सकारण हैं, अकारण नहीं। संसार की यह गणित ईश्वर की बनायी हुई है और हमारे आपके साथ जो कुछ भी होता है, वह हमारे अपने कर्मों का परिणाम है। इसमें किसी अन्य का कोई दोष नहीं है। श्रीरामचरित मानस में भी कहा गया है-

'कर्म प्रधान विश्व रचि राखा, जो जस करहिं, सो तस फल चाखा।'

गीता में भी यही बात कही गयी है। दुनिया का प्रत्येक धर्म कर्म का ही निरूपण करता है।

कपूर कह रहे थे और हम सुन रहे थे। कपूर ने आगे कहा-मेरा मन बहुत व्यथित था। मैं खूब रोया। बारबार रोया। रोने से मन हलका हो जाता है। बहुत सी व्यथा आँसुओं के रास्ते बाहर निकल जाती है।

हम चाहते हैं कि दुनिया हमारे अनुसार हो जाये। सब-कुछ जैसा हम चाहते हैं, वैसा हो यह भी कहीं होता है, अर्थात कहीं नहीं। यह सम्भव नहीं है।

ईश्वर ने सब-कुछ किसी को नही दिया है। न ही किसी को पूर्ण बनाकर भेजा है। पूर्ण है तो केवल ईश्वर है। संसार में कोई ऐसा नहीं है जिसके पास सब-कुछ हो या वैसा ही होता रहे जैसा वह चाहे। यहाँ तक कि चक्रवर्ती सम्राट राजा दशरथ के पास भी सब सुख नहीं थे। ईश्वर कुछ देता है तो कुछ नहीं भी देता है। ईश्वर कुछ देता है तो कुछ ले भी लेता है। जो इन्सान के पास नहीं होता है, उसी की पूर्ति के लिये वह चिन्तित रहता है, प्रयत्नशील रहता है। लेकिन जो नहीं है, जो कमी है, उसकी काफी कुछ भरपाई, जो है उसे और बढ़ाकर पूरा किया जा सकता है। ऐसा नहीं होता कभी किसी के साथ कि जो चाहो वह मिले, जो चाहो, वही हो। क्योंकि इन सब बातों का निर्धारण ईश्वर करता है। यह उसी के हाथ में है, आपके हाथ में नहीं है। विश्व के सभी धर्मों में यही कहा गया है और आपने स्वयं भी अपनी जिन्दगी में ऐसा ही अनुभव किया होगा। वास्तव में सुख और दु:ख दोनों ही वेदनायें हैं, अनुकूल

वेदना को हम सुख और प्रतिकूल वेदना को दु:ख कहते हैं। अनुकूल के प्रति सदिच्छा होती है, प्रतिकूल के प्रति द्वेष होता है। सुख-दु:ख, राग-द्वेष, शीत-उष्ण इन्हीं के आपस में टकराने से द्वन्द उत्पन्न होता है और इसीकारण प्राणी अपने को सुखी-दुखी अनुभव करते हैं।

कपूर साहब ने एक और सच्ची घटना का भी जिक्र किया जो मुझे भी मालूम थी। हमारे एक जमींदार साहब जब अपने कारिन्दों से वसूली करवाते थे तो वे कारिन्दे अक्सर किसानों को निर्दयता से पीटते भी थे। इस दृश्य को देखकर जमींदार साहब का एकमात्र छ:वर्षीय पुत्र उन्हें ऐसा करने से मना करता था। इस पर जमींदार साहब अपने बेटे को समझाते थे कि बेटा, 'पैसे के मामले में कोई दया-मया नहीं।' बेटे के दिमाग में भी जमींदार साहब की यह बात घर कर गयी। कालान्तर में जब यह लड़का जवान हुआ तो जमींदार साहब बूढ़े हो चुके थे और रोगग्रस्त होकर कमरे में शैय्या पर पड़े रहते थे। डाक्टर आता था और इन्जेक्शन व दवा इत्यादि देकर अपनी मँहगी फीस लेकर चला जाता था। ऐसी स्थिति में जमींदार को जब लगभग छ:माह व्यतीत हो गये तो, जमींदार के बेटे ने डाक्टर से पूछा कि डाक्टर साहब ये कब रोगमुक्त हो सकेंगे। डाक्टर ने कहा-सच बात तो यह है कि जब तक आप इनकी दवा करते रहेंगे, ये जीवित रहेंगे। रही चलने-फिरने वाली बात, तो वह सम्भव नहीं है। बेटे ने सोचा कि फिर तो इलाज कराना धन की बर्बादी है, और उसी रात एकान्त देखकर बेटा अपने बाप के कक्ष में घुसा। उसने अपने बाप का गला अपने दोनों हाथों से दबाना शुरू किया। बाप के थोड़ा प्रतिरोध करने पर बेटे ने कहा- 'पैसे के मामले में कोई दया-मया नहीं' और बेटे ने अपने बाप का गला दबा दिया। वह बाप अपने कर्मों से मर गया।

कर्मों की इस गणित, इस सच्चाई को जो समझते है, वे अधीर नहीं होते। वे बीते हुए कल की काली-छाया से अपने वर्तमान को नहीं ढापते। वे कहते हैं -

'बीती ताहि बिसार दे, आगे की सुधि ले।'

आपका अपनी साँस पर अधिकार नहीं है। दूसरे पर अधिकार की बात आप क्यों सोचते हैं। किसी ने कहा है कि यदि मनुष्य में भूलने की आदत न हो तो वह पागल हो जाये। इसीलिये ईश्वर ने व्यक्ति को अपने पिछले जन्म याद रखने की क्षमता नहीं दी है। अन्यथा यदि उसे यह ज्ञात हो कि यह हमारा पुत्र, जिसे हम इतने लाड़-प्यार से पाल रहे हैं, पिछले जन्म में हमारा घोर-शत्रु था तो उसका लाड़-प्यार का भाव समाप्त होकर घृणा के रूप में प्रगट हो जायेगा। जैसे 'कंस' जो अपनी बहन देवकी से अत्यन्त प्रेम-भाव रखता था, का बहन के प्रति सारा प्रेम-भाव एक ही प्रतिकूल भविष्यवाणी के साथ सेकेण्डों में तिरोहित हो गया। जब भगवान श्रीकृष्ण ने दिव्य-चक्षु देकर अर्जुन को उसके पिछले जन्म आदि दिखलाये तो अर्जुन जैसा पराक्रमी भी भयभीत हो गया और उसकी मोह-निद्रा भंग हो गयी। इसीलिये सन्त लोग कहते हैं कि यदि ईश्वर के अतिरिक्त किसी अन्य के प्रेम में पड़ोगे तो अन्त में पछताना ही पड़ेगा।

यह शरीर भी, जिसे हम अपना समझ बैठे हैं, वास्तव में अपना नहीं है, बल्कि ईश्वर का है, जो अच्छे-अच्छे कार्यों को करने के वास्ते हमें दिया गया है।

'बाँट ले जग में दर्द किसी का,
और यहाँ से क्या ले जाना।'

यदि हम किसी को सुखी नहीं रख सकते तो उसे हम दु:ख भी न दें। यह संसार अनित्य है। अर्थात जो आज है, वह कल नहीं और जो कल है, वह वह परसों नहीं। इसलिये किसी बीती हुई बात को निरन्तर चिपकाये रखना प्रकृति के भी प्रतिकूल है। वास्तव में बीता समय स्वप्न की तरह है और जो वर्तमान है वही सत्य है। सत्य से विमुख रहकर व्यक्ति प्रगति नहीं कर सकता। जो वर्तमान में है वही सत्य है, उसी से कल्याण होगा। क्योंकि जो नहीं है वह हमारा क्या भला करेंगा। वह तो है ही नहीं। और जो भला करेगा वही अच्छा है, वही सुन्दर है। इसीलिये बुजुर्ग लोग कहते हैं कि सदैव वर्तमान में जिओ। पिछली बातों को चिपकाकर मन में विग्रह न लाओं क्योंकि ऐसा करने से मन की ताजगी खत्म हो जायेगी। मन ही तो सबका आधार है। इसे विकृत न होने दो।

आज कपूर साहब स्वस्थ और प्रसन्न हैं। उनके परिवार में बहार लौट आयी। पहले से कहीं अधिक सुदृढ़-रूप में। उन्होंने एक ध्यान-योग केन्द्र खोल रखा है जो बहुत अच्छा चल रहा है। वर्तमान में जीने की कला, वर्तमान में जीने की समझ, उनके इस शाश्वत सु:ख और प्रसन्नता का आधार है।

कुछ ऐसे भी व्यक्ति हैं जिनके पास बीती बातों का तो कोई वाकया चिपका नहीं पड़ा है, किन्तु वे मुँगेरी लाल के हसीन सपनों की तरह भविष्य की तन्द्रा में निमग्न रहकर अकर्मण्य बन जाते हैं। हमारे एक मित्र नाटे कद के हैं, उनकी धर्म-पत्नी उनसे लम्बी-चौड़ी और अत्यन्त सुन्दर हैं। इस कारण वे अपने को हीन समझकर अपना वर्तमान चौपट करे डाल रहे हैं। जबकि ठीक इसी स्थिति में रहते हुए हमारे मोहल्ले के एक बुजुर्ग हो चले चाचा ने बहुत खुशगवार जीवन व्यतीत किया है और कर रहे हैं। उनका कहना है कि कुछ बातें हमारे हाथ में नहीं होती हैं, उनका निर्धारण ईश्वर करता है। अतएव इस सत्य को जान-समझकर हम दोनो मियाँ-बीबी ने सदैव आपस में प्रेम से और खुश रहकर जिन्दगी व्यतीत की है। जिन नासमझ लोगों ने शुरू में हम दोनों की जोड़ी देखकर टान्ट किया, उनका अपना जीवन दिखने में अच्छी जोड़ी के होते हुए भी सुखमय न होने के कारण, वे अब हमारी मिसाल देते हैं। खुश रहना और न रहना काफी-कुछ अपने ऊपर है। यदि आपने तय कर लिया है कि आप हर हाल में खुश रहेंगे तो यकीन मानिये कि आप हजार विपरीत बातों के रहते हुए भी खुश रहेंगे। कालान्तर में यह आपका स्वभाव बन चुका होगा। इसलिये बीते हुए कल पर मत जाओ, भविष्य की चिन्ता न करो। करो तो बस यह कि वर्तमान में जिओं और वर्तमान को अच्छा से अच्छा बनाने में लग जाओं। आज का वर्तमान ही तो कल का भविष्य है।

11. क्षमा करना सीखो

सन 1947 के हिन्दू-मुस्लिम दंगों से व्यथित गाँधी जी जब अनशन पर बैठे तो एक हिन्दू जिसके युवा बेटे को मुसलमानों ने मार डाला था, अत्यन्त क्रोधित स्थिति में उनके पास आया। गाँधी जी ने उससे कहा था कि तुम किसी ऐसे मुसलमान बच्चे को ढूँढ़ो जिसके माँ-बाप को हिन्दुओं ने मार डाला हो। उस बच्चे की परवरिश उसे मुस्लिम-धर्म में ही रखकर करों। तभी तुम्हारे क्रोध का शमन हो सकेगा।

गाँधी जी ने कितनी ऊँची बात कह दी। जब वह बच्चा देखेगा कि एक हिन्दू ने उसके माँ-बाप को मार डाला और एक हिन्दू ने जिसके बेटे को मुसलमान ने मार डाला था उसकी परवरिश उसे इस्लाम-धर्म में रखते हुए की गई है तो वह सच्चा मुसलमान बनेगा, जिसके हृदय में मोहब्बत होगी, नफरत नहीं, और वह अपने परेशान हिन्दू भाईयों की मदद करेगा, उनका कत्ल नहीं। वह अल्लाह का नेक बन्दा पैगम्बर मोहम्मद साहब का सच्चा अनुयायी होगा और वह हिन्दू जिसने इस बच्चे की परवरिश की, उसे इस बात से सकून मिलेगा कि उसने इन्सानियत के दुश्मनों से बदला ले लिया, इन्सानियत के दुश्मनों का दुशमन तैयार करके। लेकिन इसके लिये उस हिन्दू को स्वयं इन्सानियत की राह पर चलना पड़ा, क्षमा के रास्ते पर आगे बढ़ना पड़ा। यदि वह नफरत की राह पर आगे बढ़ा होता तो यह सब सम्भव न होता, क्योंकि नफरत से नफरत ही बढ़ती है। यह सर्वमान्य सिद्धान्त है। नफरत का शमन क्षमा से ही हो सकता है लेकिन उसके लिये कुछ करना पड़ता है। नफरत एक सुलगती आग है तो क्षमा शीतल जल।

क्षमा से हृदय-परिवर्तन तक होते देखे गये हैं। आपको पैगम्बर मोहम्मद साहब का वह वाकया याद होगा जब क्रोध के वशीभूत एक स्त्री रोजाना उन पर कूड़ा फेंकती थी। लेकिन एक दिन ऐसा न होने पर जब वे उसका हाल जानने पहुँचे और बीमारी की हालत में उसकी मदद की तो वह अपने प्रेम के आँसुओं को रोक न सकी। उसकी सारी घृणा आँसुओं में बह गयी। ऐसी होती है- क्षमा।

क्षमाशील व्यक्ति कभी तनाव-ग्रसत नहीं हो सकता। क्यो?

क्योकि वह अपने ऊपर नफरत से हुए वार का प्रत्युत्तर मोहब्बत से देता है, जो सामने वाले के दिल पर गहराई में उतर जाता है। संसार में कोई ऐसा नही है जो मोहब्बत के वार से अपने को बचा ले जाये। बड़े-बड़े शूरमा मोहब्बत की तलवार के आगे सिर नवाते हैं। यहाँ तक कि आपने सुना होगा कि शेर, भालू जैसे हिंसक व जंगली पशु ऋषियों के आश्रम में आकर बैठे रहते थे। शर्त यह है कि इसके लिये दिल से मोहब्बत करना आना चाहिये। **मोहब्बत में क्षमा सबसे पहली व अनिवार्य शर्त है। बिना क्षमा के सच्ची मोहब्बत हो ही नहीं सकती।**

ईसा-मसीह सच्चा प्रेम करते थे। तभी उन्होंने जब वे सूली पर चढ़ाये जा रहे थे प्रभु से प्रार्थना की थी कि हे प्रभु- इन्हें क्षमा करना, ये नादान हैं, इन्हें नहीं मालूम कि ये क्या कर रहे हैं। मैंने एक पालतू बन्दर को देखा जिसके गले में बँधी रस्सी का फँदा, उसके उछलने कूदने के कारण इतना कस गया था कि उसका साँस लेना दूभर था किन्तु रस्सी खोलने के लिये लोगों के पास आने पर वह उन्हें काटने दौड़ता था क्योंकि वह नादान था।

महात्मा बुद्ध के पास एक व्यक्ति आया। उसने बुद्ध को खूब जी भरकर गालियाँ सुनायी। गाली देते देते जब थक कर वह शान्त हो गया तो बुद्ध ने उससे कहा- मित्र, यदि कोई व्यक्ति आपको कोई वस्तु दे और आप उसे स्वीकार न करें तो वह वस्तु कहाँ रह जायेगी। उस व्यक्ति ने कहा- वह तो मेरे पास ही रह जायेगी। इस पर महात्मा बुद्ध ने कहा कि मित्र, मैंने आपकी दी हुई गालियाँ स्वीकार नहीं की हैं। अर्थात वह गालियाँ उस देने वाले व्यक्ति के पास ही रह गयीं। इसका यह भी अर्थ हुआ कि दूसरी तरफ कोई प्रतिक्रिया न होने से उस क्रिया का प्रभाव स्वयं क्रिया वाले व्यक्ति पर ही पड़ेगा अथवा उसकी क्रिया निर्रथक साबित होगी जैसे बालू में गेंद पटकने पर वह उछल नही पाती है।

लेकिन इन सब बातों के लिये आपकी सोच, सुलझी हुई और सटीक होनी चाहिए उसमें अगर-मगर न हो। आपको अपनी सोच में परिवर्तन लाना होगा। उस पर अभ्यास भी करना होगा। वे लोग जो केवल परमेश्वर को ही शक्तिशाली मानते हैं, वे शेष व्यक्तियों द्वारा किये गये किसी विरूद्ध कार्य का बुरा नहीं मानते, क्योंकि वे इसे परमेश्वर द्वारा किया हुआ ही मानते हैं क्योंकि उनका मानना है कि परमेश्वर ही तो कर सकता है, शेष तो सभी शक्तिहीन हैं अत: इनका क्या बुरा मानना, और चूँकि परमेश्वर ने किया है इसलिये उसने अच्छा ही किया है क्योंकि वह कभी गलत नहीं कर सकता।

क्षमा से कोई बुराई आगे नहीं बढ़ती, वह वहीं खत्म हो जाती है। इसके थोड़ा आगे बढ़ने पर प्रेम की गली शुरू हो जाती है अर्थात तनाव का खात्मा।

मैने एक दूकानदार को देखा जिसकी दूकान खूब चलती थी। उसके नौकर ऐसे काम करते थे जैसे उनकी अपनी दूकान हो। उस दूकानदार ने अपने बेटों से कह रखा था कि यदि कोई नौकर बैठा है और काम नहीं कर रहा है तो उसे कुछ कहों नहीं, जब उसका मन होगा तो वह स्वयं उठकर काम करने लगेगा।

उद्योगपति जे.डी. टाटा के कारोबार के शुरूआती दिनों में उनके एक मार्केटिंग मैनेजर से, जो नया-नया नियुक्त हुआ था, कम्पनी को पाँच लाख रूपये का घाटा हुआ। उस समय रूपया पाँच लाख की कीमत बहुत अधिक थी। बोर्ड के सदस्यों ने उसे निकाल देने की सिफारिश की, किन्तु टाटा ने अपनी पावर का इस्तेमाल करते हुए उसे नौकरी में बनाये रखा और कहा मैं व्यक्ति को पहचानता हूँ। इसने हमें इस वर्ष पाँच लाख का घाटा दिया है तो अगले वर्ष यह पचास लाख का फायदा देगा। यही हुआ, उस मैनेजर ने कम्पनी को अगले वर्ष पाँच करोड़ रूपये का लाभ पहुँचाया और आगे भी कम्पनी की बढ़ती में यह

काफी महत्वपूर्ण साबित हुआ। बड़े लोग आदमी देखते हैं, उसके ईमान को पहचानते हैं। क्षमा करना जानते हैं, तुच्छ बातों पर ध्यान नहीं देते हैं।

हमे कुछ बातों को, छोटी-छोटी बातों को थोड़ा avioid / ignore भी करना चाहिये। तनाव दूर रखने के लिये यह बहुत जरूरी है।

12. ध्यान योग और शवासन

तन, मन और मस्तिष्क को तनाव से मुक्त रखने एवं स्फूर्ति लाने के लिए ध्यान-योग व शवासन बहुत कारगर उपाय है। ध्यान योग से आपका विचलित मन व खीज भरा मस्तिष्क शान्त व स्थिर हो जायेगा, क्रोध पर नियन्त्रण होगा, धीरज बढ़ेगा तथा अपने कार्यों को बेहतर ढंग से करने की क्षमता का विकास होगा। लेकिन यह प्रतिदिन नियत समय पर किये गये अभ्यास से ही सम्भव हो सकेगा।

ध्यान योग करने के लिये प्रात:काल का समय सर्वोत्तम है, वैसे इसे सायंकाल अथवा निशाकाल में भी किया जा सकता है। प्रात: स्नान के पश्चात किसी ऐसे स्थान जहाँ शुद्ध वायु आ जा रही हो, वातावरण शान्त हो, वहाँ टाट का बोरा अथवा कुश का आसन या चटाई बिछाकर पदमासन की मुद्रा में बैठ जाये। पद्मासन की मुद्रा में बैठना सम्भव नही हो तो सुखासन के रूप में, अर्थात पलथी मारकर इसप्रकार बैठ जायें कि दोनों हथेलियों का पृष्ठ भाग आपके घुटनों पर इस तरह हो कि हाथ के अँगूठे का पोर तर्जनी उँगली के पोर को इसप्रकार स्पर्श करें कि पोरों के स्पर्श से वहाँ की नाड़ी का स्पन्दन अनुभव हो। रीढ़ की हड्ड़ी बिल्कुल सीधी रहनी चाहिये। तीन बार दीर्घस्वर में ओउम् का उच्चारण करें। तत्पश्चात सामने बनाये गये किसी बिन्दु पर ध्यान केन्द्रित कर दें। शनै: अपनी आँखे बन्द करें अब आपका ध्यान अपने मस्तक में दोनों आँखो के बीच जहाँ टीका लगाने का बिन्दु शुरू होता है वहाँ पर केन्द्रित हो जाये अर्थात बिना जोर डाले आँखे बन्द किये हुए उस बिन्दु पर आँखों से ध्यान ले जायें। अर्थात मन-मस्तिष्क को किन्ही भी विचारो से हटाइये और उसे दोनों आँखों के मध्य नाक के ठीक ऊपर जहाँ मस्तक प्रारम्भ होता है से थोड़ा उपर केन्द्रित कर ध्यान जोड़ दीजिये। इस स्थिति में कम से कम प्रन्द्रह बीस मिनट अवश्य रहें। प्रारम्भ में पाँच मिनट से शुरूआत कर सकते हैं। समय पूर्ण होने पर आँखो की पलकों पर हल्के से हाथ फेरकर धीरे-धीरे आँखें खोलिये। यह अभ्यास रोज करिये। यह एक-दो दिन में नहीं होता। इसको करने में लम्बा समय लग सकता है। फिर अपने जीवन पर इसके चमत्कारिक प्रभाव का अनुभव आप स्वयं करेंगे। ध्यानावस्था में मस्तिष्क को तिलक-बिन्दु पर केन्द्रित कर पूर्णत: विचार रहित बनाये रखना चाहिये। ध्यान योग करने से ऐसा भी होता है कि आप जिस उम्र से यह करना प्रारम्भ कर देंगे आपकी उम्र वही ठहर जायेगी अर्थात यदि आप 25 वर्ष से यह कार्य प्रारम्भ करेंगे तो 35 वर्ष की उम्र हो जाने पर भी चेहरे से आप 25 वर्ष के

ही लगेंगे। उम्र 60 वर्ष की हो जायेगी तो भी दिखने में आप 40-45 वर्ष के ही लगेंगे। आपकी उम्र के बावत लोग धोखा खा जायेगे अर्थात उनके लिये आपकी सही उम्र का अन्दाजा लगाना असम्भव होगा। वैसे आपको एक बात और बतायें, वह यह कि यदि आपके पास नियत या निर्धारित समय नहीं है तो आप ऐसा करें कि दिन-रात जब भी आपके पास थोड़ा समय हो तो लेटे-बैठे जिस मुद्रा में भी आप हों, उसी मुद्रा में अपना ध्यान केन्द्रित कर लें, ध्यान-योग पूर्ण हो जायेगा, इससे भी फायदा मिलेगा। मन शान्त रहेगा, धीरज बना रहेगा और बढ़ती उम्र चेहरे पर नहीं दिखेगी, आप तनाव मुक्त रह पायेंगे।

शवासन से आपको पूर्ण-शान्ति मिलेगा। तन, मन व मस्तिष्क की थकावट दूर होकर नयी-स्फूर्ति का संचार होगा। फलस्वरूप तनाव दूर रहेगा। शवासन किसी भी समय किया जा सकता है। विशेषकर तब जब आप व्यायम कर चुके हों, अपने दिन भर के कार्यो से थक चुके हों अथवा कोई चिन्ता आपका पीछा न छोड़ रही हो तो उस स्थिति में कम से कम दस मिनट के लिये इसे अवश्य करें। यह भी रामबाण है।

किसी लकड़ी के तख्त पर अथवा जमीन में चटाई पर आप सीधा पीठ के बल लेट जायें। पैरों की दोनो एड़ियाँ आपस में मिला लें। दोनों हाथ अपने बदन से सटा लें और हथेलियाँ उपर की तरफ रहें। यह तो हो गई आपके शवासन की मुद्रा। अब आप एक गहरी साँस खीचिये। धीरे-धीरे शरीर को ढीला छोड़ते जाइये, आँखे बन्द करते जाईये लेकिन पूरी बन्द न कीजिये- थोड़ी सी खुली रहें। श्वाँस धीमी होती जाये। शरीर पूर्णरूपेण ढीला छोड़ दीजिये। मस्तिष्क में केवल थोड़ा सा वही ख्याल रह जाये कि आप मुर्दा हो गये हैं और कोई भी विचार न रहें अर्थात मस्तिष्क, विचार-शून्य कर दीजिये। अभ्यास कीजिये कि कोई भी विचार न रह जाये, ध्यान रहे कि इसके लिये मस्तिष्क पर जोर नहीं डालना है यह धीरे-धीरे स्वभाविक तौर पर हो जायेगा जब आप महसुस करेंगे आप बिल्कुल मुर्दा हो गये हैं। शरीर में ताकत नाम की कोई चीज नहीं रह गयी है। मस्तिष्क बिल्कुल खाली हो गया है। कम से कम दस मिनट इस स्थिति में बने रहिये। प्रारम्भ में अपने शरीर को इस स्थिति तक पहुँचाने में आपको दस-पन्द्रह मिनट लग सकते हैं। इस स्थिति में पहुंचने के पश्चात आपको कम से कम दस-मिनट इस स्थिति में रहना है। आपका शरीर और मस्तिष्क विश्राम कर रहा है, उसे पूर्ण विश्राम कर लेने दीजिये। सदा दिन-रात की हाये-हाय, खिच-खिच में उसे परेशान किये रहते हैं।

उठिये समय हो चुका है। लेकिन जल्दी से नहीं, इत्मिनान से। अपना सिर एक ओर धीरे से लुढ़का दीजिये, फिर कुछ सेकेण्ड़ बाद सीधा कीजिये, अब दूसरी ओर लुढ़का दीजिये धीमे से। फिर सीधा कीजिये। अब धीरे-धीरे अपनी अधखुली आँखे पूरी खोलिये। माहौल का थोड़ा सा जायजा लीजिये। एक हाथ धीरे से उठाईये, दूसरा भी उठाईये। थोड़ा सा एक पैर उठाकर मुड़ा रखिये। इसीप्रकार दूसरा भी मोड़ लजिये। अभी आप आराम में

ही रहिये। अब जरा खुलकर अँगड़ाई लीजिये। धीरे से उठकर बैठिये। एक-दो मिनट बैठे रहिये।

अब धीरे से खड़े होईये। शवासन पूर्ण हुआ। ध्यान रहे कि एकदम से खड़ा नहीं होना है। पहले बैंठे, तब खड़े हों। अब आपका तन-मन, मस्तिष्क तरोताजा हो गया है। पूर्ण विश्राम जो उसे मिला है। उच्च- रक्तचाप वाले लोगों के लिये तो यह अत्यन्त फायदेमन्द है। रामबाण औषधि है। शवासन खाली पेट करना श्रेयस्कर है।

अब देर न करिये ध्यान-योग व शवासन आज से ही शुरू कर दीजिये। आप ही तो कहते हैं कि इस तन से ही सब-कुछ होता है। जब तन ही न रहेगा तो क्या करेंगे और तन की सुरक्षा मन-मस्तिष्क से है। इन्हें दुरूस्त रखने का उपाय है, ध्यान-योग व शवासन।

13. सफलता का मूलमन्त्र

असफल होने वाले व्यक्तियों में आधे इसलिये असफल रहते हैं क्योंकि उन्होंने अपना लक्ष्य निर्धारित नहीं किया हुआ होता है। शेष आधे इसलिये असफल हो जाते हैं क्योंकि वे अपने लक्ष्य के प्रति एकाग्र नहीं रह पाते हैं।

जब आप अपनी क्षमताओं को समझकर उनके अनुरूप अपना लक्ष्य निर्धारित कर लेते हैं तो समझ लीजिये आपने अपनी निर्धारित मंजिल का आधा रास्ता तय कर लिया है। शेष रास्ता अपने लक्ष्य में इतना डूबकर पार कर सकते हैं कि कोई भी विघ्न बाधा आपकी एकाग्रता को भंग न कर पाये। ऐसी अटल-एकाग्रता को किसी काम पर लगा देने की क्षमता से किसी भी क्षेत्र में सफलता पायी जा सकती है। इसके विपरीत लक्ष्य-बिन्दु पर न टिक पाने की प्रवृत्ति किसी प्रखर विजेता तक को मुँह की खिला सकती है। अपनी बेहतरीन क्षमताओं के रहते हुए भी ऐन मौके पर लक्ष्य के प्रति एकाग्रता भंग होने की थोड़ी सी दिमागी-चूक आपके आशाओं पर तुषारापात कर सकती है।

जब पेड़ से लटकती हुई चिड़िया की आँख पर निशान लगाने की बात आयी तो गुरू द्रोणाचार्य ने अर्जुन को ही तीर चलाने की अनुमति दी क्यों? श्रीरामचरित मानस भगवान श्रीराम के प्रेम में डूबकर लिखी गयी रचना है और यही तथ्य इस महान ग्रन्थ की सफता का राज है। महान धावक मिल्खा सिंह का उदाहरण भी हमारे सामने है। ओलम्पिक की दौड में केवल इसलिए पदक हासिल करने से चूक गये क्योंकि एक 'ओवर कान्फीडेन्स' कि दौडते समय केवल यह देखने के लिए मुँह पीछे घुमाया कि उनके प्रतिद्वन्दी उनसे कितना पीछे हैं, इतने में फर्राते हुए तीन आगे निकल गये और मिल्ख सिंह लाख कोशिशों के बावजूद चौथे स्थान पर रह गये। ऐन मौके पर लक्ष्य से भटकने का अफसोस मिल्खा सिंह को आज भी टीसता है – काश, वह लक्ष्य से न भटके होते।

अपने लक्ष्य में डूबकर काम करने की प्रवृत्ति बना लेने से आप तमाम मानसिक उलझनों और तनावों से स्वत: मुक्त रह पायेंगे। निश्चित सफलता का यही मूलमन्त्र है, इसमें

सन्देह की कोई गुन्जाइश नहीं है।

14. जिह्वा पर नियन्त्रण का करिश्मा

शरीर और दिमाग की अच्छी सेहत के लिए जिह्वा अर्थात जीभ पर नियन्त्रण रखना बहुत जरूरी है। जिह्वा का उपयोग मुख्यत: दो कार्यो के लिये किया जाता है। एक बोलने के लिए और दूसरा स्वाद के वास्ते। इन पर नियन्त्रण कर लेने से मनुष्य में इन्द्रियों पर संयम रखने की अपूर्व-शक्ति आ जाती है।

हिन्दुओं में मौनी-अमावस्या का पर्व मनाया जाता है जिसमें मनुष्य मौन-व्रत रहता है और इस दिन बिना एक शब्द भी बोले वह अपने सभी कार्य पूर्ण करता है। परीक्षणों से पता चला है कि मौन-धारण करने से व्यक्ति में एक प्रकार की ऊर्जा संचित होने लगती है और इस स्थिति में व्यक्ति सदा बेहतर ढंग से सोच पाता है और अपने कार्यों को श्रेयस्कर ढंग से अंजाम देता है। उसके विरोधी कम से कम उत्पन्न होते हैं और जो होते हैं, वे धीरे-धीरे शान्त हो जाते हैं। कहते भी हैं कि एक मौन हजार बला टालता है। बोलना ही है तो केवल उतना ही बोलिये जिसके बगैर काम न चल सके। दृढ़-संकल्प और धीरे-धीरे अभ्यास से आप ऐसा कर सकने में सफल हो जायेगे। फिर आप द्वारा अपने कार्यों के प्रति किये गये संकल्प दिन-प्रतिदिन दृढ़ होते जायेंगे और ऐसी स्थिति में आप जो चाहेंगे वह कर सकेंगे।

मैंने एक सन्त को दखा जिनके पास अनेक अमीर-घरानों से प्रतिदिन नाना प्रकार के सुस्वाद मिष्ठान्न एवं भोजन आते थे। वे क्या करते थे कि सभी को एक में मिलाकर मीस देते थे और तब खाते थे। ऐसा करके खाने से भोजन का वह स्वाद, जिसके लिए वे सुमधुर भोजन जाने जाते थे, खत्म हो जाता था। मैंने महात्मा जी से पूछा कि महाराज आप ऐसा क्यों करते हैं? उन्होंने उत्तर दिया कि जिह्वा पर नियन्त्रण के लिये। यदि वह जिह्वा स्वाद के अधीन हो गयी तो मैं इसके अधीन हो जाऊंगा।

जिह्वा पर नियन्त्रण तनाव-मुक्त जीवन और जीवन में निश्चित सफलता की गारण्टी है। इसे आप स्वयं आजमा कर देख सकते हैं। बीमारी की अवस्था में यथासम्भव मौन रहने से बीमारी शीघ्र ठीक होने में भी सहायता मिलती है। मौन रहकर जीवन का आननद लो, फिर देखो कितना मजा आता है। सर्वत्र आनन्द ही आनन्द। तनाव का नामोनिशान नहीं।

15. Make Up Your Mind

अर्थात पहली से ही दिमाग तैयार करिये, **Mind Make Up** कीजिये। उन परिस्थितियों से पार पाने के लिये जिनको बदलना आपके वश में नहीं है। ऐसा करने से होगा यह कि तूफान आयेगा और चला जायेगा किन्तु चूँकि आपका मस्तिष्क इसके लिये पहले से ही तैयार था इसलिये यह तूफान आपको विचलित न कर पायेगा। आप बड़े शान्त भाव से विना प्रभावित हुए जिन्दगी के इस नजारे को देख सकेंगे।

बादशाह अकबर और उनके नवरत्नों में से एक- बीरबल ने पहले से तयशुदा कार्यक्रम के अनुसार रात्रि में दो बजे अपने महल की सातवीं मंलिज से एक फूल की थाली आँगन में फेकी। बड़े जोरो की झनकार के साथ थाली गिरी। पूरे महल में हड़कम्प मच गया। रानियाँ सोते से उठकर चीत्कार करती हुई भागीं। नौकर-चाकर व पहरेदार भी घबड़ाये हुए दौड़े। किन्तु बादशाह अकबर व बीरबल बड़े शान्त-भाव से खड़े इस सारे नजारे को देख रहे थे। क्योंकि होने वाली घटना के प्रति उनका दिमाग पहले से ही तैयार था। इसलिये वह जो होने वाला है, की जानकारी आपको न होने पर भी, आपको इतनी जानकारी अवश्य है कि जो भी होगा वह ईश्वर की मर्जी से ही होगा और अच्छा ही होगा क्योंकि अल्लाह आपका आपसे ज्यादा खैरख्वाह है, आपने मन-मस्तिष्क को उसके लिये सदैव तैयार रखिये। इससे आप विचलित होने से बच जायेंगे और तनाव आप पर हावी नहीं हो पायेगा।

मन को एक सोच दो, मन में एक भावना भर दो। जैसे- मधुमेह के एक रोगी ने अपने मन में यह भावना भर दी, मन को यह सोच दी कि यदि उसे जिन्दा रहना है और स्वस्थ रहते हुए जिन्दा रहना है । अपनी युवा-पुत्रियों का विवाह और अन्य उत्तरदायित्वों को ठीक ढंग से निपटाना है , तो उसे अपने शरीर को बनाये रखना है और इसके लिये वह नित्य प्रात: कम से कम एक घण्टा अवश्य टहलेगा। मन को ऐसी सोच देने से, मन को इसप्रकार की भावना से भर देने के कारण वह नित्यप्रति एक घण्टा टहलने लगा और मधुमेह का रोगी होते हुए भी वह बीमारी पर कण्ट्रोल करके स्वस्थ रहकर लम्बी उम्र जिआ और अपने सभी उत्तरदायित्वों का सफलतापूर्वक निर्वहन कर सका। आप भी जीवन के तमाम तनावों से मुक्ति पा सकते हो, अपने को सही सोच देकर उसमें वैसी ही भावना भरकर थोड़ा अभ्यास करके देखिये, आप अवश्य सफलता पा लेगे।

16. कब्ज

अनेक रोगों की जड़ और तनाव के मुख्य कारणों में से एक है। कब्ज अर्थात ठीक से मल-विसर्जन न होना यानी लैटरीन जाने के बावजूद पेट साफ न होना और हाजत बनी रहना। यह स्थिति मनुष्य के मस्तिष्क को भी बुरी तरह प्रभावित रखती है। खुलकर पाखना न होने से उसका मस्तिष्क ग्रसित रहता है, जैसे- दाँत के दर्द से परेशान मनुष्य का ध्यान उसी दर्द पर होने के कारण उसके अन्य कार्य प्रभावित होते हैं वैसे ही कब्ज से पीड़ित मनुष्य अन्जाने ही प्रभावित रहता है। यहाँ तक की उसके स्वभाव में परिवर्तन आने लगता है- जैसे चिड़चिड़ा व असहनशील हो जाना आदि। कब्ज वास्तव में आधुनिक जीवन-शैली की देन है। दिन में किया हुआ भोजन शरीर में पूरी तरह परिपाक होकर मल बनने में आठ घण्टे का समय लेता है, जबकि लोग देर रात डटकर गरिष्ठ भोजन करते हैं और भोजन के पश्चात बिस्तर पर पहुँच जाते हैं तथा यह उम्मीद करते हैं कि प्रात: उठने के साथ जब वे

नित्य-कर्म हेतु जायें तो उनका पेट ठीक से साफ हो जाये। यह कैसे सम्भव है? पूर्णत: अप्राकृतिक बात है। इसके अलावा उनका खाना कैसा है? बिना रेशेवाला। रेशेवाला खाना देहाती लोग खाते हैं? शहर वाले ऐसा भोजन करेंगे, करायेंगे तो शान में बट्टा लग जायेगा? तथाकथित फास्टफूड, चाय, काफी, कोको चाउमीन, पिज्जा, मैगी, कोक-कोला, पेप्सी इत्यादि उनकी शान के प्रतीक हैं। चबेना चबाना, गन्ना चूसना, जौ-चने का घर की हाथ वाली चक्की से पिसा सत्तू खाना, घर की हाथवाली चक्की से पिसे आटे की रोटी, भौरी और देशी गुड़ आदि का नित्यप्रति भोजन, रात्रि में जल्दी सोना, सोने से कम से कम दो घण्टे पहले भोजन कर लेना, सुबह सूर्योदय से पहले उठकर हाथ में लोटा लेकर मैदान के लिये पैदल चल पड़ना और मील दो मील पर जब हाजत महसूस हो किनारे बैठकर मल-त्याग करना इनकी झूठी शान के खिलाफ है और आधुनिक जीवन-शैली इसकी इजाजत भी नहीं देती। परिणामस्वरूप शहरों में इसकी सुविधायें भी नहीं है। इस कारण शहरों में रहने वाले अधिकाधिक लोग कब्ज पाल बैठे हैं। जंगलों तथा मैदानों का नाश होने एवं आबादी में बेतहाशा वृद्धि के कारण खुले में शौच करना संक्रामक बीमारी फैलाने का कारण बन गया है। अत: चिकित्सीय दृष्टि से अब यह वर्जित है। लेकिन फिर भी कुछ उपाय किये जा सकते हैं, जो आपको कब्ज से राहत दे सकते हैं।

1. जहाँ तक सम्भव हो रात्रि का भोजन सादा व हल्का लें।
2. रात्रि के भोजन और शयन के बीच कम से कम दो घण्टे का अन्तराल रखें और इस अन्तराल में बैठे न रहें, कोई चलने फिरने वाला काम करें अथवा टहलें।
3. रात्रि भोजन के पश्चात 10-15 मिनट चहलकदमी अवश्य करें।
4. प्रात:काल दाँत साफ करके एक गिलास ताजा, गुनगुना शुद्ध जल पीकर 20-25 मिनट की सैर के बाद मल-त्याग हेतु बैठें।
5. डबल रोटी, बिस्किट, चाय, काफी, कोको, बाजार के शीतल पेय एवं अन्य फास्ट-फूड का प्रयोग बन्द करें और यदि यह सम्भव न हो तो इनकी कम से कम मात्रा उपयोग करें।
6. रात्रि में सोते समय गर्म-गर्म दूध पीयें या गर्म पानी में नींबू निचोड़ कर पीयें, कभी-कभी गर्म दूध में इसबगोल एक चम्मच डालकर पीयें।
7. खाने में हफ्ते में एक बार मटर शामिल करें, बथुए का साग, मेथी का साग, पालक का साग मौसम के अनुसार नित्य उपयोग में लायें, हाथ की चक्की का पिसा गेहूँ का आटा, चने का आटा, जौ का आटा, रोटी खाने हेतु उपयोग में लायें, सलाद के रूप में कच्चा प्याज, कच्चा लहसुन, हरी-धनिया, मूली, टमाटर, ककड़ी, खीरा, चुकन्दर आदि पर नींबू डालकर सलाद बनाकर खायें, फलों में, खाली पेट या जब खाया भोजन हजम हो चुका हो तो मीठा अंगूर, गन्ने का रस, सेवन करें।

8. भोजन के पश्चात सीधा लेट जायें और आठ बार गहरी साँसें खीचें। अब दाहिनी करवट ले। सोलह बार साँस खीचें। उसके पश्चात बायीं करवट लेटें ३२ बार साँस खीचे। अब उठकर बैठ जायें। भोजन अमाशय में पहुँच गया है। ऐसा करने से भोजन आसानी से हजम हो जाता है और पेट में यदि गुड़गुड़ होती है तो अब कोई गढ़बड़ नहीं होगी।

9. भोजन में जब भी कोई बादी चीज मटर आदि खायें तो थोड़ी सी अदरक अवश्य प्रयोग में लायें।

10. कब्ज दूर करने वाले खाद्य पदार्थ हैं: अमरूद, पपीता, बशर्ते ये पदार्थ खूब चबा-चबाकर खाये जायें। अमरूद खाने के डेढ़ घण्टे बाद खाये।

अन्त में सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि खाने में समय लगायें, जल्दबाजी कतई न करें अर्थात भोजन का हर कौर खूब चबायें, तब तक चबायें जब तक कि वह मुँह में बिल्कुल हलवा न बन जाये और तब वह गले में उतारें। खाते समय और खाने के कम से कम डेढ़-दो घण्टे बाद तक तथा खाने से आधे घण्टे पहले जल न पीयें, बाद में खूब जल पीयें। भूख से दो रोटी कम खायें अर्थात ओवरईटिंग कतई न करें, चाहे दो बार के बजाय तीन बार खा लें।

17. धनाभाव

आधुनिक जीवन में धनाभाव भी व्यक्ति की जिन्दगी में तनाव के मुख्य कारकों में से एक है। एक मध्यवर्गीय परिवार के लिये जहाँ आय सीमित रहती है, धन का अभाव अनेक समस्याओं को जन्म देता है। क्योंकि यह वह वर्ग है जिसकी महत्वाकांक्षायें आसमान देख रही होती हैं, जबकि सीमित आये होने के कारण एक-एक करके वह उन्हें धूल-धुसरित होते हुए देखता रहता है और अंत में विडम्बना को प्राप्त होता है। लेकिन मैंने ऐसे परिवारों को भी देखा है जिन्होंने अपने को आहिस्ता-आहिस्ता गरीबी से निकाल कर उच्च-कक्षा में प्रतिस्थापित करने में सफलता हासिल की है। धैर्य इसकी सबसे जरूरी और अनिवार्य शर्त है।

हमारे साथ वोहरा नाम का एक लड़का पढ़ता था। उसके परिवार में उसकी विधवा माँ और तीन भाई व तीन बहनें थीं। जिस मकान में वह रहता था, वह किराये पर था। उस जमाने में जब हम लोग पैण्ट-शर्ट पहनकर कालेज आते थे, वोहरा और उसके भाई दो बटन वाली पुराने चाल की कमीज और सादा पैजामा व हवाई चप्पल पहन कर आते थे। पैजामा व कमीज उनकी माँ द्वारा घर पर ही सिला हुआ होता था। यह रही पहनावे की बात अब सुनिये खाने की बात। घर पर हाथ से आटा पीसने वाली एक चक्की थी। सभी भाई-बहन अनाज से आटा पीसने के लिये नित्यप्रति उस पर आधा-घण्टा का समय लगाते थे। मन्जन के नाम पर नीम की दातून और स्नान के लिये साबुन के स्थान पर मुल्तानी मिट्टी का प्रयोग पूरा परिवार करता था। हर मौसम में कोई न कोई सब्जी बाजार में कम दामों पर मिल ही जाती है, वही सब्जी बाजार से खरीद कर लायी जाती। मात्र उबालकर ऊपर से हल्का

नमक, काली मिर्च और धनिया डालकर रोटी के साथ पूरा परिवार खाता था। शक्कर के स्थान पर गुड़ का प्रयोग वे लोग किया करते थे। एक छोटी गाय भी पाल रखा थी किन्तु उसका दूध गरीबी के बावजूद बेचते न थे वरन पूरा परिवार स्वयं पीता था। प्रत्येक भाई-बहन घर पर ही और घर के बाहर भी दो घण्टे रोज ट्युशन पढ़ाते थे। उनकी यह मासिक आय उनकी स्वयं की पढ़ाई की सभी जरूरतों को पूरा करती थी। इससे ही वह सब बचत करके इसे एक साथ बैंक में जमा कर देते थे। घर पर उनकी माँ रद्दी अखबार और पत्रिकाओं से लिफाफे बनाती थीं जिसमें सभी भाई-बहन समयानुसार साथ देते थे। इन लिफाफों को बाजार में बेचकर जो धन मिलता था उसी से परिवार का शेष खर्च पूरा किया जाता था। बोहरा एक काम और करता थ, वह यह कि रद्दी अखबारों और पत्रिकाओं जिनमें कुछ प्रतियोगी परीक्षाओं की पत्रिकायें भी आ जाती थी, से हिन्दी, अँग्रेजी, गणित, विज्ञान, सामान्य-ज्ञान आदि विषयों के महत्वपूर्ण अंश की कटिंग करके उसने हर विषय की अलग-अलग कटिंग की पुस्तकें बना ली थी जो कालान्तर में इन भाई बहनों के उच्च-प्रतियोगी परीक्षाओं में उत्तीर्ण होने में मील का पत्थर साबित हुईं। इनकी आय का एक साधन और भी था। वह यह कि इनके मोहल्ले के कुछ न कुछ लोग जब उनका परिवार अपने नाना-नानी या अन्य किन्ही रिश्तेदारों के यहाँ चला जाता था अथवा बीमारी आदि किन्ही कारणों से परिवार में कोई भोजन तैयार करने वाला न होता था तो बोहरा की माँ उनके लिये टिफिन तैयार करती थीं और बोहरा उन टिफिनों को दे आता था। इससे मिलने वाली आय इस परिवार की अतिरिक्त आय थी। आज इस परिवार के तीन लड़को में से सबसे बड़ा सदानन्द बोहरा प्रदेश शासन के एक विभाग में गजटेड-ऑफिसर है। उससे छोटे दोनों भाई प्रशासनिक सेवा के अधिकारी हैं तीन बहनों में दो बहनें एक गर्ल्स डिग्री कालेज में अब प्रोफेसर हो गयी हैं तथा एक सबसे छोटी आयकर विभाग में उच्च राजपत्रित अधिकारी है। बोहरा की माँ अभी हाल में ८० वर्ष की उम्र में दिवंगत हुईं। धन्य है वह माँ जिसने सादा-जीवन और उच्च-विचार की धारा अपने साथ पूरे परिवार में कुछ इसतरह समाहित कर दी कि आज भी जब बोहरा मिलता है तो उसे अपने विगत जीवन पर दु:ख नहीं अपितु नाज है।

यहाँ हम धनाभाव के बादलों को धैर्य, संयम, बुद्धि-विवेक, सूझ-बूझ और अथक परिश्रम से दूर कर देने की दो और सच्ची घटनाओं का उल्लेख भी करेंगे।

कानपुर का एक वैश्य परिवार जिसमें आठ कुआँरी कन्यायें थी। पुत्र एक भी नहीं, इनके माता-पिता को दिन-रात इनकी शादी-ब्याह और दहेज की चिन्ता खाये जा रही थी। आखिरकार इनके पिता ने काफी सोच-विचार के पश्चात जब यह पाया कि वे एक से अधिक कन्या के विवाह हेतु धन कभी जुटा न सकेंगे तो उन्होंने बड़ी कन्या के विवाह हेतु जो धन एकत्र किया था उस धन से एक दूकान और पाँच सिलाई मशीने खरीद कर अपनी सभी आठो कन्याओं को उनकी माँ के साथ लेडीज टेलरिंग शॉप बड़े धूमधाम से खुलवाई और

इसका खूब प्रचार-प्रसार किया। आख्रिरकार मेहनत और ईमानदारी रंग लायी। दूकान खूब कसके चल निकली। एक-एक करके सभी लड़कियों का ब्याह एक से एक अच्छे घरों में हो चुका है और अब उस दूकान को इनके माता-पिता अनेक महिला-कर्मियों की सहायता से चला रहे हैं। आज यह काफी अमीर हो चुके हैं तथा दूकान भी काफी बड़ी कर ली है।
आप भी यदि सही दिशा में मेहनत और ईमानदारी से आगे बढ़ने की ठान लें तो देखेंगे कि धनाभाव के बादल आखिरकार छट ही जायेंगे, यह निश्चित है। फिजूलखर्ची रोककर धन संचय करना भी धनोपार्जन का दूसरा नाम है।

पुराने लखनऊ में एक मस्जिद है जिस पर लिखा है- 'गोया कि मैंने खा लिया'। इसके नाम और निर्माण के पीछे जो इतिहास है, उसके अनुसार एक निहायत गरीब इंसान के दिल में यह तमन्ना उठी कि वह भी अपनी मेहनत की कमाई से एक मस्जिद की तामीर करावे। लिहाजा उसने उसी दिन से जो कुछ भी हो सकता था रोज-ब-रोज कुछ न कुछ पैसा मस्जिद की तामीर की खातिर एकत्रित करना शुरू कर दिया। यहाँ तक कि किसी अवसर पर जब उसको कुछ पैसा मिलता और उस पैसे से उसका कुछ अच्छा खाने को दिल चाहता। मसलन मुर्गा खाने को दिल चाहता तो वह उतना पैसा गुल्लक में डाल देता और कहता - गोया कि मैंने मुर्गा खा लिया। गोया कि मैंने यह खा लिया, गोया कि मैंने वह खा लिया, और वह पैसा वह गुल्लक में डालता रहता। ऐसा करते-करते 22 बरस गुजर गये। अब उसके पास इतना पैसा एकत्रित हो गया था जिससे एक मस्जिद की तामीर करायी जा सकती थी। उस इंसान ने बड़ा सब्र किया था। सब्र का फल सदैव मीठा होता है। मस्जिद बनकर तैयार हुई। अब उस मस्जिद का नाम रखने की बात आयी। यह तय हुआ कि मस्जिद का नाम 'गोया कि मैंने खा लिया' रखा जाये। आज यह मस्जिद गवाह है एक इंसान के सब्र के इम्तहान की। ऐसे कामों में अल्लाह भी मददगार होता है।

इस तरह धनाभाव दूर करने के उपर्युक्त दो साधन हैं। एक ओर धनोपार्जन हेतु अतिरिक्त यत्न किये जायें, वहीं दूसरी ओर फिजूलखर्ची बिल्कुल बन्द कर दी जाये। एक लम्बे समय तक सब्र के साथ यह प्रक्रिया चलते रहने से धनाभाव निश्चित रूप से दूर किया जा सकता है।

18. वो हार कर भी जीते, हम जीत कर भी हारे

चैत्र मास की नवरात्रि में हम माँ विन्ध्याचल देवी के दर्शन हेतु विन्ध्याचल पहुँचे थे। दस लोगों की टीम थी जिसमें महिलायें, बच्चे व पुरूष थे। स्टेशन के प्लेटफार्म से बाहर आते ही एक हृष्ट-पुष्ट नवयुवक पण्डा साथ लग गया। हम लोगों ने उससे कहा भी कि उसकी कोई आवश्यकता नहीं है किन्तु फिर भी वह पीछे-पीछे चलता रहा। कई बार मना करने के बाद भी न मानने पर उसे गाली भी दी गयी किन्तु इसका उस पर कोई प्रभाव न था। वह नितान्त शान्त भाव से एक फासले पर पीछे-पीछे आता रहा। उस दिन विकट की

गर्मी थी। हम लोग जहाँ ठहरे थे, पानी की वहाँ कोई व्यवस्था न थी। पानी की खोज में हम लोग काफी दूर हो आये। गंगा-तट के सिवा कहीं पानी न था। नल सूखे पड़े हुए थे। अन्य यात्री भी पानी के लिये भटक रहे थे। इतने में देखा कि वह पण्डा पसीने से लथपथ दो बाल्टी पानी लिये आ रहा है। पानी स्वच्छ था। उसने लाकर हमारे सामने रख दिया, बिना कुछ बोले हुए। वह पानी खत्म हुआ तो दो बालटी पानी पीने के वास्ते उसने और लाकर रखा। विन्ध्याचल पहुँचने से लेकर छोड़ने के वख्त तक वह बराबर हर मदद के लिये हमारे साथ था नि:शब्द। चलते वख्त हम लोग उसके सम्मुख लज्जित थे। जो दक्षिणा हम लोगों ने खुद से उसे दी, वह बहुत कम थी, फिर भी उसने बिना कुछ कहे उसे स्वीकार किया। महान लोग ऐसे ही हुआ करते हैं जो कभी हारते नहीं। उनकी सदैव जीत ही होती है। जरूरी नहीं कि वे बहुप्रचारित और बहुप्रसारित हों। वे हमारे आपके घरों में, या फिर कहीं भी हो सकते हैं।

किसी महात्मा ने सच ही कहा है कि प्रतिद्वन्दी को पछाड़ो मत। अपनी महानता का परिचय देकर उसे क्षुद्र बनने दो।

महारानी पदमनी के सम्मुख अपनी लाज बचाने का जब कोई रास्ता शेष न रहा तो उन्होंने आत्मोत्सर्ग का सहारा लिया। एक लाख की सेना के साथ चार साल तक डेरा डाले अलाउद्दीन को महल में राख के ढेर के सिवा कुछ न मिला।

सुनते हैं कि महात्मा गाँधी लन्दन में गोलमेज कान्फ्रेंस के लिये जब लार्ड्स की सभा में पहुँचे तो उनके पहुँचते ही लाडर्स, महात्मा के तेज से कुछ ऐसा प्रभावित हुए कि अपनी-अपनी कुर्सियों से थोड़ा उठ खड़े हुए, लेकिन जैसे ही उन्हें ध्यान आया कि यह तो एक गुलाम देश का प्रतिनिधि है, वे बैठ गये। इस बात को लेकर दूसरे दिन इंगलैण्ड के समाचार-पत्रों में बड़ी हाय-तौबा रही कि एक गुलाम देश के नुमाइन्दे के पहुँचने पर उसके सन्मुख लाडर्स अपनी चेयर से उठकर खड़े हो गये। सच कहा गया है- लोगों ने जीते हैं देश तो क्या, हमने तो दिलों को जीता है। ये वो बात है जिसके सम्मुख तलवारें भी नतमस्तक हो जाया करती हैं।

हिन्दी में एक शब्द है नि। यह एक उपसर्ग शब्द है और जिस शब्द से यह जुडता है उसका अर्थ वह कुछ ऐसा कर देता है कि वह शब्द अपना अर्थ कुछ इसतरह व्यक्त करता है जिसका मतलब हाँ और न, दोनों के होते हुए भी उससे अलग कुछ इसतरह हो जाता है, जैसे-जल में कमल होता है किन्तु उस जल का, कमल के पत्तों पर प्रभाव नहीं रहता अथवा जैसे ईश्वर से समस्त संसार, जड़-चेतन है किन्तु उसमें होते हुए भी दोनों सत्ता का पृथक-पृथक आभास होता हो। उदाहरण के लिये एक शब्द है नियोग। अति-प्राचीन काल में सन्तान-विहीन राज्य-दम्पत्तियों के सन्तान (वंश-चलन) के वास्ते नियोग की प्रथा थी। इसमें संयोग और वियोग के होते हुए भी इससे परे नियोग की सत्ता नियोग के भागीदारों के

मस्तिष्क में विद्यमान रहती थी। निस्पृह, निर्लिप्त, निर्विकार, निरंजन इत्यादि अनेकों नि:उपसर्ग से युक्त शब्द अपने में स्वाधीन और तनाव-मुक्त जीवन का राज छुपाये हुए हैं।

आज भी हमारे समाज में अधिकाश महिलायें और दलित अपने को एकप्रकार से पराधीन महसूस करते हैं और इसकारण तनाव-ग्रसत भी होते रहते हैं किन्तु यदि ये इस नि को अपने आचरण में ढालते हुए आगे बढ़ेंगे, अपना रास्ता तय करेंगे तो वे निश्चित रूप से अपने को पराधीन न महसूस करते हुए अपनी मन्जिल पा लेंगे।

ऊपर दिये गये उदाहरण और इससे पहले के पाठों में अंकित उदाहरण इस 'नि' को आचरण में ढालने हेतु किये गये प्रयास-मात्र हैं। क्योंकि जितना ही हम 'नि' को अपने जीवन में ढाल सकेंगे, उतना ही अधिक तनाव-प्रतिरोधक क्षमता हमारे भीतर विकसिक होगी ओर हम सुखी व प्रसन्न रहेंगे।

अन्त में, अपकों पुन: स्मरण करा दूँ कि भगवान राम, भगवान बुद्ध, ईसामसीह, मोहम्मद साहब, महारथी अर्जुन, धर्मराज युधिष्ठिर, महात्मा गाँधी, स्वामी विवेकानन्द आदि इन सभी महापुरूषों का जीवन पूर्णत: 'नि' शब्द का प्रर्याय या प्रतिबिम्ब था जिसके बल पर इन्होंने प्रसन्नतापूर्वक विना किसी तनाव के अपने अपने कार्यों को किया। यदि इस 'नि' के भाव का कुछ भी अंश हम समझकर अपने जीवन में ढालने में सफल हो जायें तो उतने से ही हम न केवल तनाव-ग्रस्त होने से बचे रहेंगे अपितु जीवन में निश्चित रूप से उन्नति भी करेंगे।

कबिरा खड़ा बाजार में, माँगे सब की खैर।
ना काहू से दोस्ती, ना काहु से बैर।।

उपर्युक्त उक्ति का अर्थ यह नहीं है कि आप निराशावादी जीवन व्यतीत करें, बल्कि अर्थ यह है कि राग और द्वेष को व्यक्तिगत न बनायें। यह दोनों जिस मात्रा में आपके पास व्यक्तिगत बनकर रहेंगे, उसी मात्रा में आप सुख-दु:ख से लिपटे रहकर तनाव ओढ़े रहेंगे। इससे परे अर्थात अपने को लिप्त न रखते हुए निष्काम-भाव से किया गया कर्म ही तनाव-मुक्त जीवन का रहस्य है।

19. भोजन और नियमितता

नियमितता अर्थात Regularity जीवन में प्रगति करने हेतु नियमितता अनिवार्य शर्त है। एक बच्चा अपनी गुल्लक में प्रतिदिन एक रूपया डालता है। तीस दिन पश्चात उस गुल्लक में तीस रूपये होंगे। इस बात की गारण्टी है। कहने का तात्पर्य है नियमितता जीवन में प्रगति की गारण्टी है।

बिहार राज्य हमारे देश के सबसे पिछड़े राज्यों में से एक है। बी.बी.सी. रेडियो पर इस राज्य के एक आई.ए.एस. अधिकारी का साक्षात्कार प्रसारित किया गया। इस अधिकारी ने एक बहुत अच्छी बात कही और वह यह कि राज्य के नेतागण आदि चाहे

लड़ते रहें- आपस में झगड़ते रहें, कुछ भी करें लेकिन कम से कम राज्य की प्रगति के लिये कोई प्लान (योजना) बना लें। फिर उस पर हम नियमित रूप से कुछ न कुछ करते रहेंगे और कालान्तर में इससे राज्य की प्रगति अवश्य ही दृटिगोचर होगी।

आप भी अपने जीवन की प्रगति के लिये अपनी क्षमताओं और रूचि के अनुरूप कोई योजना तैयार कर लें। तत्पश्चात उसके लिये नियमित रूप से योगदान करते रहें। मसलन आप चाहते हैं कि आपका शरीर स्वस्थ्य व सुन्दर दिखलायी पड़े और जब आप 50 वर्ष के हों तब भी आप 40 वर्ष से अधिक न लगें तो इसके लिये आप क्या करेंगे? यह कार्य एक दिन या एक मास में तो सम्पन्न नहीं हो जायेगा? इस हेतु आपको एक योजना तैयार करनी होगी। जैसे आप प्रतिदिन प्रात:काल कम से कम आधा-घण्टा मार्निंग-वाक गहरी-गहरी श्वासें लेते हुए पूरी करेंगे। भोजन में खनिज लवण व विटामिन वाले खाद्य पदार्थो को प्रधानता देंगे तथ बाजारू मिर्च-मसाले-मैदा-चीनी व अति नमक, डालडा, रिफाइण्ड-आयल वाले भोज्य पदार्थो से बचकर रहेंगे। ध्यान-योग करेंगे आप देखेंगे कि समय आने पर आपकी मुराद पूरी होगी। लोग कहेंगे आप अभी युवा दिखते हैं, आखिर इसका राज क्या है? तब आप मन ही मन मुस्कुरायेंगे।

मेरा कहा मानिये- तरक्की की योजना बनाइये और नियमितता को जीवन में ढाल लीजिये अर्थात गुल्लक में पैसे डालने की भाँति नियमित रूप से अपनी तरक्की की योजना में योगदान करते रहिये। हो सकता है कि शुरू में आपको थोड़ी दिक्कत महसूस हो लेकिन जल्दी ही यह आपकी खुशी बन जायेगी। आपकी आदत में शुमार हो जायेगी। जीवन में एक मधुर संगीत बजने लगेगा।

आप विद्यार्थी हैं तो क्यों नहीं अभी से आप अपने पढ़ने का समय और उसकी अवधि भले ही वह एक या दो घण्टे की हो, निर्धारित कर लेते हैं और इसे आजीवन बनाये रखें। यकीन मानिये यह आपकी बड़ी सफलताओं का कारक बनेगा। लेकिन फिर वही बात कि नियमितता टूटे नहीं।

अब वैज्ञानिक भी इस तथ्य को स्वीकार करने लगे हैं कि शरीर का स्वस्थ रहना जैवीय-घड़ी की नियमितता और निरन्तरता पर निर्भर है। यह घड़ी गड़बड़ाई कि व्यक्ति अस्वस्थ्ता की ओर अग्रसर हुआ। उदाहरणार्थ- आप कभी दस बजे भोजन करते हैं तो कभी दो बजे। कभी आप दस बजे सोते हैं तो कभी बारह, एक बजे। कभी पाँच बजे, कभी आठ बजे तो कभी दस बजे सोकर उठते हैं। शौच के लिये कभी छ:बजे, कभी 9 बजे कभी दस-बारह बजे जाते हैं। यह सब अनियमित दिनचर्या का सूचक है। ऐसा करने से आपके अन्दर की जैविय-घड़ी गड़बड़ा जायेगी जो आपको किसी भी रूप में शारीरिक/मानसिक बीमारी से ग्रसित कर सकती है और आप या डाक्टर यह न जान पायेंगे कि आखिर बीमारी का असली कारण क्या है? डाक्टर दवायें देता रहेगा और आप खाते रहेंगे और यूँ ही डग्गमग डग्गमग जीवन चलता रहेगा और हो सकता है कि आगे न भी चल पाये अर्थात बीच में ही

दगा दे जाये। क्योंकि इसके लिये आपकी अनियमित दिनचर्या काफी हद तक उत्तरदायी हो सकती है। होता यह है कि आप द्वारा की जा रही या की गयी हर अनियमितता का विपरीत प्रभाव आपके शरीर में चल रही जैवीय-घड़ी पर पड़ता है जिससे आप हर पल अन्जान रहते हैं। इसलिये यह परम आवश्यक है कि जीवन की दिनचर्या में भी यथाससम्भव नियमितता लायें। स्मरण रहे कि जंगली पशु-पक्षी अपनी नियमित दिनचार्य के कारण ही स्वस्थ रहते हैं।

खरगोश और कछुए की कहानी आपने अवश्य ही पढ़ी या सुनी होगी यह भले ही कहानी हो लेकिन कछुए की तरह नियमित चाल चलने वाला अवश्य ही जीवन में तेज गति से किन्तु अनियमित चाल चलने वाले खरगोश से आगे हो जाता है और अपने लक्ष्य को भी सहज ढंग से पा लेता है।

मैंने अपने जीवन में कई ऐसे लोगों को भी देखा है जो 75-80 वर्ष की लम्बी आयु तक मुझे पूर्णत: स्वस्थ्य दिखायी दिये। जब इनकी अवस्था 35-40 वर्ष की थी तब भी ये स्वस्थ थे और आज 80 वर्ष की आयु में भी कमोवेश वैसे ही स्वस्थ्य और श्रमशील दिखलायी पड़ते हैं। यह लोग न तो कभी मार्निंग-वाक करते दिखलायी पड़े और न ही इन्होंने कभी कोई व्यायाम ही किया। इनका भोजन भी मैंने देखा, वह साधारण ही रहता था। मैंने इनसे पूछा कि दादा आपके स्वस्थ जीवन का आखिर रहस्य क्या है? बोले- बेटा, समय पर जो रूखा-सूखा मिला प्रभु का प्रसाद समझकर प्रसन्नता से ग्रहण कर लिया। फिर भी मैंने इनकी जिन्दगी में झाँककर देखा तो पाया कि इनकी दिनचर्या सदैव नियमित रही है। समय पर उठना, समय पर भोजन, समय पर सोना इत्यादि सभी कुछ सदैव नियमित रहा है। खाली बैठे तो इन्हें हमने कभी देखा नहीं। सदैव कुछ न कुछ करते ही रहते थे। वास्तव में इनके स्वस्थ और श्रमशील जीवन का रहस्य इनकी नियमित दिनचर्या ही थी जो बिल्कुल सहज ढंग से इनके जीवन में समायी हुई थी।

20. पाजिटिव अर्थात् सकारात्मक सोच-सही सोच

पाजिटिव सोच रखने वाले व्यक्ति जीवन में सदैव खुशहाल-खुशनुमा देखे जाते हैं, यहाँ तक कि उनके सम्पर्क में आने वाले व्यक्ति भी प्रसन्नचित्त बन जाते हैं। यह सब उस व्यक्ति की पाजिटिव सोच का ही परिणाम है जबकि नेगेटिव सोच वाले व्यक्ति बहुत कुछ पास में होते हुए भी कुछ न कुछ न होने का रोना ही रोते रहते हैं और अपने सम्पर्क में आने वाले व्यक्ति को भी तनाव-ग्रस्त कर देते हैं। पाजिटिव सोच रखने वाले व्यक्ति जीवन की बड़ी समस्याओं को भी सहज रूप में लेकर उनका समुचित समाधान करने में सहज रूप से ही तत्पर रहते हैं, जबकि नेगेटिव सोच वाले व्यक्ति जीवन को समग्र रूप में देखने का प्रयास न कर वे छोटी-छोटी सी बातों को लेकर भी बड़ी हाय-तौबा उत्पन्न किया करते हैं। इससे जीवन की सारी मिठास कड़ुवाहट में बदलने के सिवाय और कुछ नहीं होता।

क्या है नेगेटिव और पाजिटिव सोच? इसका जीवन पर किस प्रकार नकारात्मक/ सकारात्मक प्रभाव पड़ता है? यहाँ पर इसका हम थोड़ा सा खुलासा करते हैं।

तरंगों और उनके प्रभाव को वर्तमान युग में वैज्ञानिक सिद्ध कर चुके हैं। मस्तिष्क के वाह्य और अन्तर्मन की बात भी स्पष्ट है। वाह्य मस्तिष्क की सोच की छाप अन्तर्मन पर पड़ती है। जहाँ से तरंगे उठती रहती हैं। यही तरंगें अर्थात ऊर्जा हमारे वाह्य क्रियाकलापों पर, उसके परिणाम पर असर डालती हैं। कैसे? किसी व्यक्ति को दस लोग जिसमें उसके मिलने वाले, हितैषी, परिचित, अपरिचित, एक-दो विरोधी सम्मिलित हों, दूसरे तीसरे दिन मिलने पर यह कह दें कि तुम पहले से कमजोर दिखलायी पड़ रहे हो- क्या बात है? तो निश्चित जानिये कि मात्र 15 दिवस के पश्चात ही वह व्यक्ति वास्तव में कमजोर हो जायेगा। क्योंकि उसके अन्तर्मन में यह बात समा जायेगी कि वास्तव में वह कमजोर हो गया है। यह नकारात्मक अर्थात नेगेटिव सोच उसे गिरा देगी। जबकि यदि उससे यह कहा जाये कि वह पहले से कहीं अधिक स्वस्थ है या उसकी बीमारी दूर हो रही है और इस प्रकार उसके मन में यह सोच आ जाये कि वास्तव में वह स्वस्थ हो रहा है और उसकी बीमारी दूर हो रही है तो निश्चित जानिये कि वह व्यक्ति निश्चित रूप से स्वस्थ्य हो जायेगा। इससे कोई सन्देह नहीं है। यह सकारात्मक सोच का परिणाम है। कहा गया है कि जीवन आध्यात्म की एक कड़ी है और सकारात्मक सोच इस कड़ी का एक हिस्सा है। एक दृष्टान्त प्रस्तुत है : गुरुकुल में एक ऋषि के दो शिष्यों में एक राजपुत्र था और दूसरा सामान्य गृहस्थ का पुत्र था। दोनों ने बारह वर्ष तक गुरू के सानिध्य में रहकर शिक्षा प्राप्त की। सामान्य गृहस्थ के पुत्र ने बड़ी जी-जान लगाकर गुरू की सेवा की थी और पूर्ण निष्ठा से गुरू-आदेशों का पालन किया था। किन्तु राजपुत्र की सेवा-सुश्रूषा में वह बात न थी, अपितु वह हवन आदि सामग्री से मेवा आदि भी चुराकर खा लिया करता था। गुरू से यह बात छिपी न थी। फिर भी बारह वर्ष की शिक्षा-दीक्षा पूर्ण होने पर गुरू ने दोनों को समान-भाव से आशीर्वाद देकर विदा किया। गुरू-कुटी के बाहर निकलते ही राजपुत्र को अशर्फियों से भरी थैली पड़ी मिली, जबकि सामान्य-गृहस्थ के पुत्र के पैर में काँटा चुभ गया। उसने गुरु से कहा कि गुरु जी जिस राजपुत्र ने आपकी पूरी निष्ठा से सेवा भी नहीं की, हवन आदि सामग्री से चोरी भी की, उसे अशर्फियों से भरी थैली मिली, जबकि मुझे, जिसने आपकी पूरी निष्ठा से सेवा की उसे आश्रम से बाहर आते ही यह पुरस्कार मिला कि पैरों में काँटा चुभ गया। गुरु ने उसे अन्तर्दृष्टि के माध्यम से दिखलाया कि देखो आज इसका राजतिलक होने वाला था लेकिन इसे मात्र अशर्फियों की थैली ही मिली और इसी समय इसी राजा के यहाँ तुम्हें फाँसी लगने वाली थी लेकिन तुम्हें मात्र काँटा लगने से ही छुटकारा मिल गया।

जीवन में जो कुछ घटित हो रहा है उसे सकारात्मक रूप में लो। यह सही भी है क्योकि वह परम-पिता है अपने पुत्रों की भलाई का उसे सर्वोत्तम ध्यान है, आप से भी ज्यादा।

सकारात्मक सोच अर्थात पॉजिटिव सोच से मनोबल बना रहता है और आप जानते हैं कि मनोबल का होना कितना जरूरी है। इससे तनाव नहीं रहता है। इसलिये पुराने लोग कहा करते थे कि सदैव शुभ-शुभ बोलो। कहा भी गया है कि व्यक्ति की जैसी सोच होती है, वैसे ही उसके विचार बनते हैं और उन्हीं विचारों के अनुरूप ही वह कर्म करता है। यही कर्म कालान्तर में कर्मफल अर्थात भाग्य के रूप में प्रगट होता है। इसलिये यदि आप पाजिटिव सोच रखकर आगे बढ़ेगें तो निश्चित रूप से आपका भाग्य भी पाजिटव होगा।

21. संगीत

कहीं दूर से आ रही शहनाई की आवाज या किसी गीत की आवाज कानों में पड़ती है तो कितना भला लगता है, जी चाहता है कि इसे सुनते ही रहें। ऐसे ही कभी राह चलते रेडियो से आते किसी गीत के बोल इतने कर्णप्रिय होते हैं कि बरबस वहीं रुक जाने को मन करता है। कोई-कोई गीत तो इस तरह होते हैं कि जैसे जिया खींचे लिये जाते हों। मन न जाने कहाँ चला जाता है। हम किसी और ही दुनिया में खो जाते हैं और इस कदर उसमें डूब जाते हैं कि अपनी सुध-बुध ही खो बैठते हैं या फिर उस गीत को, साथ-साथ हम भी स्वाभाविक रूप से अपने आप गुनगुनाने लगते हैं। क्या होता है कि वो जो संगीत की स्वर लहरी है उसकी तरंगे आपके मन की तरंगित होती भावनाओं से तादात्म्य स्थापित कर लेती हैं अथवा फिर जो आपका अन्तर्मष्तिष्क है उसमें सोयी भावनाओं को तरंगित कर उससे एकाकार होने लगती है। क्योंकि भावनायें तरंगों में परिवर्तित होकर एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुँच रही होती हैं। यह तरंगें इतनी सूक्ष्म होती हैं कि इन्हें पकड़ कर रिकार्ड कर लेने और उसे ऐसी बोलती भाषा में बदल देने का कोई यन्त्र अब तक नहीं बन सका है, जिसे सुनकर जो भी व्यक्ति चाहे, समझ ले, सुन ले अर्थात टेप-रिकार्ड की तर्ज पर मन और अन्तर्मष्तिष्क की भाषा को रूपान्तरित कर देने का यन्त्र नहीं बन सका है। जिस दिन यह बन जायेगा उस दिन लोग मूक पशु-पक्षियों और पेड़-पौधों से भी बातें करने में समर्थ हो जायेंगे।

कहते हैं कि पागल व्यक्ति यदि रो दे तो वह पागलपन की स्थिति से वापस लौट आता है और ऐसा हुआ भी है। अनेक ऐसे व्यक्ति हैं जो वर्षों पागलपन की स्थिति में रहने के पश्चात किसी ऐसी घटना के दृश्य को देखकर या किसी गीत-संगीत को सुनकर अचानक रो पड़े और इसतरह वह पागलपन की स्थिति से वापस लौट आये। होता यह है कि उस दृश्य या उस गीत, संगीत की तरंगे उस पागल के अन्तर्मस्तिष्क में संग्रहीत उन सोयी तरंगों की किस्म की और पूर्णरूपेण उनके समान होती हैं जिनके कारण वह पागल हुआ था अथवा फिर जो उसका सबसे हसीन स्वप्न था और इस कारण ऐसी तरंगे उसके अन्तर्मस्तिष्क की सोयी तरंगों को उद्वेलित करने में सफल हो जाती हैं और उनसे एकाकार हो जाती हैं, तादात्म्य स्थापित कर लेती हैं। इस प्रकार अन्तर्मस्तिष्क के सक्रिय होते ही वह उसे बाह्य

मस्तिष्क के पटल पर प्रेषित कर देता है और पागल पुन: यथार्थ की दुनिया में लौट आता है।

हमारा मस्तिष्क चौबीसों घण्टे कुछ न कुछ सोचा करता है, तनिक भी विश्राम नहीं ले पाता। किसी सोच से वह प्रसन्न होता है तो किसी सोच से व दुखित हो जाता है। और उस स्थिति में उसे अत्यधिक क्षति पहुँचती है जब उसमें अन्तर्द्वन्द हो, विचार-वैमनस्य हो या फिर उसका कार्य समरूप न होकर विषम रूप हो और क्षण-क्षण में उसे अपनी स्थिति बदलनी पड़ रही हो, जैसे- किसी को कई व्यक्ति तुरन्त/एकसाथ अपनी-अपनी बात सुनाना चाहते हों और सुनने वाला उनके दबाव में हो, या फिर भिन्न तात्कालिक कार्यों में एक कार्य पूर्ण हुआ नहीं कि दूसरा और दूसरा पूर्ण हुआ नहीं कि तीसरा, चौथा कार्य तत्काल पूर्ण करने का दबाव हो। इसप्रकार भिन्न-भिन्न कारणों से हमारे मस्तिष्क पर चोट पहुँचती है। इसलिये उसकी अच्छी सेहत बनाये रखने के लिये उसे ऐसा पोषण चाहिये जो उसे कुछ देर के लिये ही सही, पूरी तरह एकसार बना दे। संगीत वह स्वर है जिससे मस्तिष्क को ऐसा पोषण दिया जा सकता है। कोई मूवी-फिल्म या नाटक या कहानी, उपन्यास, मैच का दृश्य इत्यादि भी यह कार्य कर सकते हैं कि जिसमें आप इतना मगन हो जायें, खो जायें, कि अपने को ही भूल जायें कि आप कहाँ पर हैं, थोड़ी देर के लिये ही सही आप दूसरी दुनिया में पहुँच जायें। यह मस्तिष्क का पोषण है, टानिक है। इसकी उचित मात्रा का और किस्म का निर्धारण आपको करना है क्योंकि आप बेहतर जानते हैं कि क्या आपको सूट करता है।

संगीत की सूक्ष्म तरंगों से पेड़-पौधे भी प्रभावित होते हैं, वे इन्हें ग्रहण करते हैं। मन्त्रोच्चार भी संगीत की ही एक विधा है जिसके माध्यम से देवताओं का आह्वान किया जाता है। यह निर्भर करता है संगीत के स्वर की किस्म और उसकी फ्रीक्वेंसी पर, जो पहुँच कर, उनसे उठती तरंगों से या उनकी सोयी तरंगो को उद्वेलित कर तादात्मय स्थापित करके उनसे एकाकार/एकसार हो जायें, जिनके लिये यह सम्प्रेषित की जाती है। इसी विद्या से आजकल योरोप में अनेक रोगों के इलाज किये जा रहे हैं और उनको ठीक करने में सहायता ली जा रही है जिसके अनुकूल परिणाम सामने आ रहे हैं।

निराश, हताश, सोये हुए नीरस या अनमने से मन में संगीत-लहरी नया प्राण फूंक देती है, नयी स्फूर्ति ला देती है। अपने कार्य को बेहतर ढंग से अंजाम देने के लिये या फिर आलस्य आदि भिन्न-भिन्न कारणों से बहुत दिनों से रूके कार्यों को एक नयी चेतना व उत्साह से प्रारम्भ करने हेतु वैसे ही उसी प्रकार के संगीत-गीत सुनिये, फिर देखिये कि आपके ये रूके, ठहरे कदम खुद-ब-खुद कैसे आगे बढ़ जाते हैं।

22. नींद

तनाव का नींद से सीधा सम्बन्ध है। नींद कम आती है अथवा आप बहुत अधिक सोते हैं या फिर दोपहर में एक घण्टे से अधिक सोते हैं तो वैसी स्थिति में आपका मस्तिष्क

भारी रहेगा प्रफुल्ल नहीं रहेगा, लिहाजा आप किसी बात पर अतिशीघ्र तनाव-ग्रस्त हो सकते हैं। यह भी हो सकता है कि आप पर्याप्त समय अपनी नींद के लिये देते तो हैं किन्तु सोते में भी आप जागते रहते हैं। ऐसी नींद भी तनाव उत्पन्न करती है।

अतएव एक सन्तुलित व गहरी नींद तनाव दूर करने व तनाव-मुक्त रखकर मनुष्य को प्रफुल्ल व प्रसन्नचित्त बनाये रखने में सबसे महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

विशेषज्ञों के अनुसार एक स्वस्थ्य मनुष्य को अथवा यूँ कहें कि स्वस्थ्य बने रहने के लिये मनुष्य को छ:घण्टे से कम तथा आठ घण्टे से अधिक नहीं सोना चाहिये और दोपहर का सोना यथासम्भव त्याग देना चाहिये या फिर दोपहर में एक घण्टे से अधिक कतई नहीं सोना चाहियें।

नींद के मामले में किसी दवा या टेबलेट का इस्तेमाल करना अच्छा नहीं है। इससे अन्तत: नुकसान ही पहुँचता है। अच्छी नींद पाने के लिये पर्याप्त शारीरिक-श्रम अत्यन्त आवश्यक है। यदि यह सम्भव नहीं है तो भी इतना शारीरिक-श्रम तो अवश्य ही करना चाहिये जिससे खाया-पीया ठीक से पच जाये, क्योंकि पेट का अपचा भोजन अच्छी नींद लाने में अक्सर बाधक होता है। इसलिये रात्रि का भोजन सोने से कम से कम दो घण्टे पूर्व ग्रहण कर लेना चाहिये और वह भी थोड़ा व हल्का हो।

खाने के तुरन्त बाद बिस्तर पर पहुँच जाना अच्छा नहीं है। नहीं कुछ है तो कम से कम पन्द्रह-बीस मिनट चहलकदमी ही कर लें। जहाँ तक शारीरिक-श्रम की बात है, यदि वह आपके पास नहीं है तो सुबह-शाम ही लम्बी-सैर अथवा किसी आउट-डोर गेम को दिनचर्या का अंग बना लें। रात्रि को टी.वी. देखकर सोने से अच्छा है कि किसी रुचिकर पुस्तक के पन्ने पढें लेकिन अधिक नहीं। अच्छा तो यह होता कि आप प्रभु का स्मरण करके सोयें। बेशक नींद अच्छी आयेगी। इससे पहले आधे हाथ-पैर व मुँह धोकर बिस्तर पर आयें। दिन के भोजन में थोड़ा दही या मट्ठा मिल जाये तो बहुत अच्छा है। यह भोजन गहरी नींद लाने में सहायक होता है। नींद के मामले मे पेट को साफ रखना बहुत जरूरी होता है। कब्ज नहीं रहनी चाहिये। इसके लिये सम्यक उपाय पूर्वलिखित पाठ में दिये गये हैं। समय-समय पर इनका अनुसरण करते रहें।

गहरी नींद में शरीर के और मस्तिष्क के जख्मों को भरने की कुदरती क्षमता है जो बड़ी से बड़ी दवा नहीं कर पाती उसे नींद पूर्ण करती है। सन्तुलित नींद छ: से आठ घण्टे के अभाव में अर्थात लम्बे समय तक सन्तुलित नींद की उपेक्षा करते रहने से मनुष्य के शरीर में अथवा मस्तिष्क में कोई ऐसा रोग आ जाता है जिसका सही कारण डाक्टर पता नहीं कर पाते हैं। वह यह नहीं जान पाते हैं कि पूरी नींद न लेने अथवा कम नींद लेने के कारण ही अमुक रोग उत्पन्न हुआ है। फलत: उस मरीज का भाँति-भाँति ढंग से इलाज चलता रहता है, फिर भी वह ठीक नहीं होता और यदि ठीक हो भी गया तो रोग पुन: किसी दूसरे रूप में प्रकट हो जाता है। देखा है कि ऐसे रोग कुछ इस रूप में प्रकट होते हैं कि डाक्टर उसमें

आपरेशन की ही सलाह देते हैं। एक स्त्री जो वर्षो से रात्रि ११ बजे सोती थी और प्रात: ४ बजे उठ जाती थी तथा दिन में भी नहीं सोती थी एवं योगासन व व्यायाम इत्यादि सभी कुछ करती थी और पूर्णत: स्वस्थ थी। मासिक-धर्म में अनियमितता होने पर उसने डाक्टर से चेकअप कराया। डाक्टर ने अल्ट्रासाउण्ड रिपोर्ट देखकर गर्भाश्या में तन्तुओं का जाल होना बताया और आपरेशन कराने की सलाह दी। तत्पश्चात उसने आपरेशन न कराकर अपनी नींद छ: से सात घण्टे कर दी। कुछ ही समय पश्चात करायी गयी अल्ट्रासाउण्ड रिपोर्ट में स्थिति सामान्य हो चुकी थी। यह सन्तुलित और नैसर्गिक गहरी नींद का कमाल था। इसीप्रकार एक पुरूष जो वर्षों से रात्रि में 11 बजे सोता था और सुबह 4 बजे ही बिस्तर छोड़ देता था। तत्पश्चात कसरत आदि सभी कुछ करता था। कालान्तर में ब्रेन्-ट्युमर का शिकार हुआ जिसका उसे ऑपरेशन कराना पड़ा। मैं गारण्टी से तो नहीं कहता कि उपर्युक्त दोनों व्यक्ति जो सन्तुलित नींद को छोड़कर स्वास्थ्य के सभी नियमों का पालन करते थे, सन्तुलित नींद न लेने के कारण अपने उक्त रोगों से ग्रसित हुए किन्तु इतना निश्चित जरूर हूँ कि सन्तुलित नींद का अभाव अवश्य ही अनेक शारीरिक व मानसिक व्याधियों का जनक है। इस बात का अनुभव मुझे अन्य ऐसे कई व्यक्तियों की जीवनचर्या को देखकर हुआ है जो काफी लम्बे समय वर्षों से सन्तुलित नींद का परित्याग किया हुए थे तथा इसे वे अपनी खास पहचान मानते थे और कालान्तर में काफी समय तक पूर्ण स्वस्थ रहने के पश्चात इसी एक कारण से वे एक न एक गम्भीर बीमारी का शिकार हुए या होते होते बचे। काश ! वे सन्तुलित छ: से आठ घण्टे की नींद का महत्व समझ पाते।

23. व्यस्तता

मन-मस्तिष्क अर्थात् ऊर्जा का भण्डार अर्थात् 'जिन्न'। आपने सुना होगा कि एक साहब की किसी तपस्या से प्रसन्न होकर एक जिन्न प्रकट हो गया। 'जिन्न' की शर्त यह थी कि उसे किसी न किसी कार्य में लगे रहने का निर्देश मिलता रहे। 'जिन्न' आदेशनुसार कार्य करता रहेगा। 'आदेश' न मिलने पर वह अपने 'स्वामी' को ही खा जायेगा। यह मन मस्तिष्क भी 'जिन्न' की तरह ही अत्यन्त ऊर्जावान है। यदि इसे निरन्तर लगाये न रखा गया तो यह स्वयं पर ही आक्रमण कर देता है, चिन्ता या तनाव के रूप मे। अत: इसे खाली न होने दें। सार्थक कार्यों में लगाये रहें। थक कर चूर हो जाये तो सो जाने दें। इसलिये 'व्यस्तता' जरूरी है।

घर में अकेलेपन से एवं सास की प्रताड़नाओं से ग्रस्त-त्रस्त एक बहू ने स्कूल में अध्यापिका की नौकरी कर ली। उसने कहा-मुझे बहुत खुशी महसूस हुई। जब से मैं बड़े-बड़े लड़कों को पढ़ाती हूँ, उन बदमाश लड़कों को कण्ट्रोल मे रखती हूँ और खूब अच्छी तरह से उन्हें समझती हूं। उनके माकूल और नामाकूल प्रश्नों का बखूबी उत्तर देती हूं कि एक ओर वे अपने माकूल प्रश्नों का उत्तर पाकर सन्तुष्ट हो जाते हैं तो दूसरी ओर नामाकूल प्रश्नों

का सटीक जवाब सुनकर बिल्कुल चुप हो जाते हैं तो इससे मेरा घर-ससुराल वालों द्वारा कुचला गया आत्मविश्वास पुन: लौट आता है। मुझे बहुत खुशी होती है और तनाव न जाने कहाँ चला जाता है।

आप भी अपनी सन्तुष्टि का कोई कार्य पकड़ लीजिये, उसे करिये, आपको लगेगा कि तनाव की दुनिया से दूर आपको एक नयी दिशा मिल गयी है।

24. अलमस्त, यायावर और घुमन्तू बनें

एक दैनिक समाचार पत्र में प्रकाशित यह रिपोर्ट पढ़िये : ''क्या आपको भीख माँगना आता है। क्या आप बिना पैसे, बिना तैयारी के सब कुछ छोड़छाड कर सिर्फ चन्द प्लास्टिक के थैलों के साथ अपने सबसे घिसे जीर्ण कपड़ों में सड़कों पर आ सकते हैं? क्या उसके बाद आप बिना नहाय-धोये कई दिनों तक नुक्कड़ के लैम्प-पोस्ट तले या कचरा घरों-पार्को की बेन्चों पर सोने को राजी हैं? क्या आप इन मलिन, गन्दी जगहों पर पद्मासन लगाकर यौगिक प्राणायाम साध सकेंगे, यदि हाँ, तो आपका अमेरिका तथा ब्रिटेन के समृद्ध कम्पनी-एक्जीक्युटिव में इन दिनों बेहद लोकप्रिय हो चले तनाव-घटनाओं कार्यक्रम, स्ट्रीट-रिट्रीट में स्वागत है। पूरे नुस्खे की कीमत है। 50 पौण्ड यानी कोई साढ़े तीन हजार रूपये।''

कार्यक्रम के मूल में नेक विचार यह है कि अधिकाधिक कमाने की चूहा-दौड़ में लगे तेज तर्रार युवा बहुत कम उम्र में धन-कुबेर तो बन जाते हैं, लेकिन वे बढ़ते तनाव, घटती निद्रा और टूटते परिवारों के रूप में जल्दी ही इस सफलता की भारी कीमत चुकाने को बाध्य होते हैं। समय-समय पर स्ट्रीट-रिट्रीट पर निकल कर यायावर भिक्षावृत्ति करना और बेसहारा उत्पीड़ित मजलूमों की क्षमता का हिस्सा बनना, उनको फिर जमीनी जिन्दगी से जोड़ता है, और इस दौरान योगाभ्यास उनकी शारीरिक-मानसिक ऊर्जा को घटने से बचाता है। अमेरिका में इसके अनुयायी नवसमृद्ध युवाओं में कम्पनी के उच्च-पदस्थ मुलाजिम, डाक्टर तथा प्रशासकीय कर्मचारी ही नहीं, टामवुल्फ जैसे कुछ बेस्ट सेलिंग लेखक भी जुड़ रहे हैं जो महल-दुमहले छोड़कर गलियों की खाक छानते हुए अपने लेखन का कच्चा माल जुटाना चाहते हैं।

आपने उपर्युक्त पंक्तियों को पढा। आसानी से इस बात का अन्दाजा लगाया जा सकता है कि आधुनिक, अत्याधुनिक जीवन-शैली किस प्रकार आपको आपकी जड़ों से काटकर मौत के मुहाने तक पहुँचाने में सक्रिय भूमिका अदा कर रही है। वास्तव में कपड़ो के भीतर हर इंसान नंगा है। जाड़े से बचने के लिय आप कपड़ा पहनकर नहीं नहा सकते। आप कुदरत की दी हुई जमीनी सच्चाई को नहीं मिटा सकते। आप बहुत अमीर हैं, मगर क्या डायबेटिक हैं, पेट-गैस की बीमारी पीछा नहीं छोड़ती और इस वजह से हार्ट के भी पेशेण्ट है, आदि आदि। आप मजदूर बन जाइये, फटे पुराने कपड़े पहने हुए सुबह-सबेरे वहीं खड़े हो जाइये जहाँ लोग राजगीरों, मजदूरों को लेने पहुँचते हैं। दिन-भर जब ईंटा-गुम्मा

ढोयेंगे तो सारी बीमारी दूर हो जायेगी जब वैसा ही खाने को, वैसा ही पहुड़ने को मिलेगा जैसा मजदूरों को मिलता है। एक मास बिता लीजिये इन्ही की तरह। फिर देखिये सारी बीमारी छू मन्तर हो जायेगी। अगर जिन्दगी चाहते हैं तो एक मास का समय इस हेतु निकालना ही पड़ेगा, क्योंकि अमीरी का अभिशाप ऐसी गरीबी ही दूर कर सकेगी।

25- इनसे रहिये सावधान

लगभग 75-80 वर्ष का एक वृद्ध लाठी टेक-टेक कर जेठ की तपती दुपहरी में निर्जन सड़क पर धीरे-धीरे आगे बढ़ा चला जा रहा था। एक बंगले के गेट पर किसी कार्य से घर की गृह-लक्ष्मी आकर खड़ी थी। उससे कुछ दूरी पर वह बूढ़ा, लाठी सहित लड़खड़ाया और गिर पड़ा। उस स्त्री का ध्यान उस ओर गया। तब तक बूढ़ा कुछ उठाने का प्रयास करने लगा और उठ कर बैठ गया। फिर किसी तरह लाठी के सहारे खड़ा हुआ। आगे बढ़कर उस स्त्री ने पूछा 'क्या बात है, बाबा।' 'कुछ नहीं बेटी, जरा चक्कर आ गया। कल से कुछ खाया नहीं।' बूढ़े ने कहा। 'क्यों?' स्त्री ने प्रश्न किया। बूढ़े ने कहा- 'कोई हो तो दे। बुढ़िया एक मास हुए चल बसी। लड़का, बहू लेकर परदेश कमाने चला गया।' यह भी न देखा कि बूढ़े बाप के पास खाने-रहने को कुछ है या नहीं। भीख मुझसे मांगी न जायेगी।' वह स्त्री दयार्द्र हो गयी। अपने बंगले के अन्दर बुला लायी। मुंह-हाथ धुलवाया। आदर सहित भोजन कराया। यदि कोई सतर्क व्यक्ति वहां होता, तो देखता कि इस मध्य बूढ़े की अनुभवी आंखों ने पूरे बंगले की स्थिति का जायजा ले लिया। भोजन कर आशीष देता हुआ, बूढ़ा वहां से चला गया। यह बूढ़ा कच्छा-बनियाइन गिरोह का मुखिया था। दो दिन पश्चात् इस गिरोह ने उस स्त्री जोकि एक प्रख्यात डाक्टर की धर्मपत्नी थीं, के बंगले पर कहर बरपाया। डाक्टर, उनकी धर्मपत्नी एवं दो बच्चे बड़ी बेरहमी से मार डाले गये। कहानी सुनाने के लिय मात्र एक छ: वर्षीय बच्ची कहीं छुपकर बच गयी। राज खुला तब, जब बूढ़ा पकड़ में आया और बच्ची ने उसे पहचान लिया। उस बूढ़े की निशानदेही पर गिरोह के कुछ सदस्य भी पकड़े गये।

एक और घटना सुनिये जो स्वयं मेरे साथ घटी। कड़े जाड़े में रात्रि लगभग 10 बजे टेम्पों पर अपनी धर्मपत्नी व एक छोटे बच्चे के साथ बस स्टेशन जाने के लिए मैं बैठा था। टेम्पो चालक एक-दो और सवारी मिल जाने की प्रतीक्षा में रूका था। तभी बगल में रिक्शे पर सवार एक रिक्शा-चालक जो कि लगभग 30 वर्ष का होगा, मेरी ओर देखकर अपना हाथ अपने मुंह-पेट की तरह इंगित करने लगा। आशय था कि वह बहूत भूखा है, परेशान है। मेरे कुछ न बोलने पर वह अनुनय-विनय करने लगा कि साहब, हमारे रिक्शे पर बैठ जाइये। मैं पहुंचा दूंगा। मैंने उससे कहा कि भाई इतने पैसे पड़ते हैं, वही दूंगा। बोला-'ठीक है, साहब आप आइये। गरीब का भला हो जायेगा।' मैं स्त्री-बच्चे सहित, टेम्पो छोड़कर उसके रिक्शे पर बैठ गया। गन्तव्य पर पहुंचाने पर मैंने उसे एक नोट दिया जिसके आधे पैसे उसे वापस करने थे। मैंने सोचा था कि जब यह पैसे वापस करेगा तो इसे कुछ पैसे और दे

दूंगा। लेकिन उसने पैसे वापस ही नहीं किये और रिक्शा मोड़ कर चलने लगा। जब मैंने उससे पैसा वापस करने को कहा, तो वह बहुत तेज अकड़ गया। उसका यह बदला रूप देखकर मैं आश्चर्य चकित था। रिक्शे वाला दिखने में मुझसे हृष्ट-पुष्ट एवं लम्बा था। किन्तु उस समय मुझे अपनी शारीरिक बल एवं साहस का भी भरोसा था। सो मैंने उसका गिरहबान पकड़ कर उसे कसकर अपनी ओर खींचा। वह लड़खड़ाते हुए गिरने से बचा और बोला- छोड़िये, बाकी पैसे दे रहा हूं। मैंने उसे छोड दिया। वह तुरन्त दौड़कर भागा और जाकर चौराहे से दो कान्स्टेबिल बुला लाया। कान्स्टेबिल बिना मेरी कोई बात सुने सीधे उस रिक्शेवाले का पक्ष लेकर बोलने लगे और उलटे यह भी आरोपित करने लगे कि मैंने रिक्शेवाले को मारा है। मुझे स्पष्ट आभास हुआ कि ये पुलिसिवाले इस रिक्शेवाले से मिले हुए हैं और यहां परदेसियों के साथ, ये सब मिलकर कुछ न कुछ करके अपनी आमदनी बनाते रहते हैं। किन्तु मैं यहां स्थानीय था। बहस होते देख, वहां ड्यूटी पर तैनात दरोगा जी भी आ गये। मैंने उन्हें अपना परिचय दिया। परिचय सुनकर उन्होंने रिक्शेवाले को पैसे वापस करने हेतु निर्देशित किया। रिक्शेवाले ने थोड़ी सी टाल-मटोल कर पैसे वापस किये। मुझे यह भी आभास हुआ कि दरोगा जी ने कुछ दबाववश पैसे वापस कराये हैं, अन्यथा कोई और होता तो वे कतई ऐसा न करते।

एक और घटना का भी जिक्र विषय क्रम में जरूरी है। बात उन दिनों की है जब मैं एक कार्यालय में सर्विस में था। इस कार्यालय में ऊपर की इनकम का भी जोर था। दूसरे विभाग के एक कर्मचारी का एक महत्वपूर्ण व्यक्तिगत-कार्य मेरे पटल पर आया। उसका कार्य काफी श्रम-साध्य एवं दुष्कर था तथा बिना मेरे व्यक्तिगत प्रयास और आगे बढ़कर बुद्धि-कौशल व कठिन-श्रम का परिचय दिये बिना संभव न था। तथापि मैंने मानवता के दृष्टिकोण से मात्र पीड़ित के सहायतार्थ उसका कार्य प्रारम्भ किया और उसके कार्य हेतु अपने व्यक्तिगत सम्बन्धों का भी इस्तेमाल किया। वह व्यक्ति प्रारम्भ में ही एक धनराशि और मिठाई लेकर मेरे पास आया था। किन्तु मैंने उसे विनयपूर्वक लेने से इन्कार कर दिया। यह भी समझाया कि देखो भाई, यहां और सब लेते हैं किन्तु मेरा जमीर इनकार करता है इसलिये यह धन और मिठाई छूना भी मेरे लिये पाप है। किसी तरह आपका कार्य हो जाये, यही मेरा अभीष्ट है। वह व्यक्ति अक्सर मेरे पास आता और मीठी-मीठी बातें करता जैसे वह मेरा कोई आत्मीय हो। अत्यन्त विनम्र होकर दुआ-सलाम तो करता ही रहता था। खैर, उसके कार्य को मैंने अपना अतिरिक्त समय, श्रम, बुद्धि एवं दौड़धूप तथा व्यक्तिगत सम्बन्धों का इस्तेमाल कर पूर्णता की स्थिति में पहुंचा दिया। अब बस केवल आदेश, जो बनकर तैयार था और उस पर सम्बन्धित अधिकारी के हस्ताक्षर हो चुके थे, उसे निर्गत होना था। इस मध्य मेरी नौकरी दूसरे विभाग में लग गयी और नये विभाग में तत्काल ज्वाइन करने हेतु मैं अपना चार्ज दे चुका था। वह व्यक्ति मेरे पास आया। उसे मेरी नयी नौकरी की बात मालूम न थी। नया वर्ष था सो एक बड़ी सी डायरी वह मुझे देने लगा और बोला- साहब, आपने

कुछ नहीं लिया, तो कम से कम यह डायरी तो ले ही लीजिये। मैंने उससे कहा- देखो भाई, मेरी दूसरे विभाग में नौकरी लग गयी है और मैंने इन्हें जो मेरे सामने बैठते हैं, को अपना चार्ज दे दिया है। अब सब तैयार है आदेश केवल डिस्पैच होना है। सो इन्हें ही यह डायरी दे दो, अब यही तुम्हारा कार्य करेंगे। इतना सुनते ही तुरन्त वह व्यक्ति मेरे पास से उठ खड़ा हुआ और बिना मेरी तरफ देखे व मुझसे एक शब्द भी बोले बिना, वह सामने वाले के पास चला गया। उसने मुझे पलट कर देखा भी नहीं। कुछ देर बाद मैंने देखा कि वह व्यक्ति सम्बन्धित महोदय के पीछे-पीछे, दो-तीन अन्य पिछलग्गुओं के साथ किसी होटल की तरफ जा रहा था। मुर्गा बनने। उसके हाथ में डायरी न थी। उसने मुझे देखकर भी अनदेखा कर दिया। "नेकी कर कुआँ में छोड़" वाली कहावत जीवन में उतारने की मुझे सीख मिल गयी।

ऊपर की घटनाओं का जिक्र मैंने इसलिये नहीं किया है कि आप नेकी करना छोड़ दें वरन् इसलिये किया है कि आप नेकी भी करें तो पूर्णत: सावधान होकर। इसतरह कि आप पर उलटा पलटवार न होने पाये। जरा संभलकर, जरा बचकर।

मेरा अपना यह मानना है कि पूरी दुनिया के मनुष्यों के केवल दो वर्ग ही हो सकते हैं। एक 'अच्छे' और दूसरे 'खराब'। न कि अमीर-गरीब, जाति-धर्म, या देशी-विदेशी आदि। अमीरों में भी अच्छे और भलेमानुष लोग मौजूद हैं। इसी प्रकार गरीबों में भी। हर जाति धर्म और देश में अच्छे एवं भले लोग हैं। इसी प्रकार खराब यानी दुर्जन लोग भी सर्वत्र हर जाति, धर्म और देश में हैं। केवल गरीब हो जाने से अथवा किसी देश, धर्म या जाति का होने से कोई अच्छा या खराब नहीं हो जाता। जो सज्जन है, वह सज्जन है। जो दुर्जन है, वह दुर्जन है। फर्क ऐन मौके पर आपको करना है, अपनी व्यावहारिक अनुभवी बुदिध से।

इसलिये इनसे रहिये सावधान अर्थात् धोखे से बचें, क्योंकि धोखा आपको तनावग्रस्त बना सकता है। ऐसे लोग हर क्षेत्र में, हर रूप में (शादी-ब्याह की बातचीत तय करते समय, जमीन-जायदाद की खरीद-फरोख्त के समय, कोई सामान खरीदते समय, यात्रा के समय, नौकरी इत्यादि कोई महत्वपूर्ण कार्य करा देने का लालच देते समय आदि) मिलेंगे। इनकी बातों में न आइयेगा। मूल, जड़, वास्तविकता अर्थात् गुणवत्ता यानी 'मेरिट' क्या है, उसे जान-समझ कर आगे का निर्धारण कीजियेगा। शेक्सपियर ने कहा है कि शैतान भी अपना काम बनाने के लिये धर्म-ग्रन्थों का हवाला दे सकता है। इसलिये इस उक्ति को सदैव ध्यान में रखिये। 'बुदिधमान पहले सोचते हैं और मूर्ख बाद में।' धोखा देने वाला सबसे पहले आपका विश्वास हासिल करेगा। बिना विश्वास हासिल किये कोई आपको धोखा नहीं दे पायेगा। संशय वाला काम मत करिये। जो दिल गंवारा न करें, वह काम भी मत करिये। जिसमें "मन पुरै" वही फैसला करिये। इसलिये जब तक कोई अपने मूलरूप का दर्शन न करा दे, उसका मूलरूप अर्थात् Basic Character सामने न आ जाये, उसे बेईमान ही समझें। व्यक्ति का मौलिक चरित्र अर्थात् Basic Character शीघ्र ही उसके किसी न किसी कार्य में, हाव-भाव, चाल-चलन आदि में व्यक्त हो ही जाता है, उसे समझने

का स्वयं प्रयास करिये, जल्दबाजी न करिये। जेबकतरा किसी व्यक्ति की जेब उसी समय काटता है, जब वह व्यक्ति असावधान हो या उसका ध्यान किसी कारणवश कहीं और हो। इसी प्रकार अपने-अपने क्षेत्र के धूर्त व्यक्ति भी यह सब पहचानने में माहिर होते हैं और अपना जाल बिछाकर शिकार फांस लेते हैं। ये अमीर-गरीब, नौकर-मालिक या किसी भी जाति-पांत धर्म, देश या वर्ग के हो सकते हैं। इन्हें पहचानिये। इनसे बचकर रहिये। हो सकता है कि दुष्ट व्यक्ति अपने असली रूप को छिपाते हुए अपने को अत्यन्त सज्जन एवं मददगार के रूप में पेश करें। आपकी सहायता भी कर दे। किन्तु आप महाकवि कालिदास की यह उक्ति सदैव ध्यान में रखिये कि सज्जन से निष्फल याचना भी अच्छी है, नीच से सफल याचना भी अच्छी नहीं है। प्रत्येक व्यक्ति का एक 'बेसिक कैरेक्टर' होता है, उसे पहचानने का प्रयास करिये। किसी व्यक्ति का यह 'बेसिक कैरेक्टर' ही उसके अच्छे या खराब होने का मापदण्ड है ऊपर से भले दिखने वाले, मदद कर देने वाले, कभी-कभी अन्दर से कितने 'कलुष' होते हैं, इस बात का भान हमें जब होता है, तब तक हम धोखा खा चुके होते हैं। इसलिये 'इनसे रहिये सावधान' जो रूप बदल-बदल कर अपने को पेश करने में माहिर हैं। रामायण के 'कालनेमि' राक्षस की तरह।

26. अन्त में कहना है कि...

'कोई है' जो दुखियों के दुखों को दूर करता है, संकटों से मुक्ति दिलाता है और सज्जनों का एकमात्र सहारा है। 'कोई है' जिनके बल पर सूरज, चाँद, तारे चमकते हैं, हवाये चलती हैं, जो अनेकानेक रूपों में है, लेकिन है 'एक' ही। जो ऊर्जाओं की ऊर्जा है और कारणों का भी कारण है लेकिन उसका कारण कोई नहीं है, उसकी ऊर्जा कोई नहीं। वह स्वयं में ही कारण है और स्वयं ही अपनी ऊर्जा है। वह निस्सन्देह मनुष्य की बुदधि से परे है और उसकी पकड़ से बाहर है बल्कि समस्त चराचर जगत उसकी पकड़ में है। यद्यपि प्रवृत्तिवश मनुष्य/वैज्ञानिक उस एक की ही निरन्तर खोज में लगे हैं और अब यह स्वीकार करने लगे हैं कि 'कोई है'। गोस्वामी तुलसीदास जी के शब्दों में-

'सोइ जानइ, जेहि देउ जनाई। जानत तुमहिं तुमहिं होई जाई।।'

कहना यही है कि उसका दामन पकड़े रहना, कभी भी न छोड़ना। सूरदास जी के शब्दों में-

जैसे उड़ि जहाज को पंछी, पुनि जहाज पे आवे।